: प्राचीन कालीन राग: "वर्गीकरण"

—: प्राचीन कालीन रागों का वर्गीकरण

राग वर्गीकरण से अभिप्राय विभिन्न आधारों पर रागों का अलग-अलग विभाजन है। संगीत के ~~विभि~~ भिन्न-भिन्न विद्वानों ने अपने ज्ञान के आधार पर रागों की अलग-अलग संख्या निर्धारित की है। कवि लोचन जी ने 75 रागों का उल्लेख किया है। रामामात्य जी ने 61 और व्यंकटमुखी जी ने गणित के आधार पर रागों की संख्या 72 मानी है। विभिन्न आधारों पर रागों का वर्गीकरण निम्न है:

1. जाति वर्गीकरण :-

जाति और राग पर्यायवाची शब्द है। जिस प्रकार आजकल राग गायन प्रचलित है, उसी प्रकार प्राचीन काल में जाति गायन प्रचलित था। राग और जाति की परिभाषा भी समान है। भरतकृत नाट्य शास्त्र में जाति की व्याख्या में कहा गया है कि स्वर और वर्ण से युक्त रचना को जाति कहते है। और इनकी संख्या 18 है। ये 18 जातियाँ षड्ज और मध्यम ग्राम से उत्पन्न हुई ~~जिन्हें~~ थी। षड्ज ग्राम ~~से~~ से 7 जातियाँ उत्पन्न हुई जिन्हें शुद्ध के नाम से जाना जाता है। और मध्यम ग्राम में से

NOTES

11 जातियाँ उत्पन्न हुई जिन्हें विकृता कहते है। शुद्ध जातियों में 7 स्वरों का प्रयोग किया जाता था और उनका नाम भी इन स्वरों के आधार पर हुआ था। जैसे षड्ज, मध्यम

गंधार, मध्यमा, पंचम, धैवती, निषाद। ये 7 शुद्ध जातियाँ कहलाती थी और इनके नाम वाला पहला अक्षर ही ग्रह, अंश और न्यास होता था।

11 विकृत जातियों में से तीन षड्ज ग्राम की (गांधारी, मध्यमा, पंचमी) तथा मध्यमा ग्राम की 8 विकृत जाति मानी जाती गयी। शुद्ध जातियों के लक्षण में परिवर्तन करने से जैसे-न्यास अपन्यास, ग्रह, अंश र-वर देने से तथा दो या दो से अधिक जातियों को एक में मिला देने से विकृत जातियाँ का निर्माण होता था।

उदाहरणार्थ:- षाड्ज + गांधारी = षड्ज कौशिकी

गांधारी + आर्षभी = आंध्री विकृत

भरत काल में जाति गायन के 10 लक्षण माने जाते थे - ग्रह, अंश, न्यास अपन्यास, अल्पत्व, बहुत्व, औडव, षाडव, मंद्र, और तार। भरत ने इसे "दस विधि जाति लक्षणम्" कहा है। ग्राम से मूर्छना और मूर्छना के आधार

NOTES

पर जातियों की रचना हुई। संगीत रत्नाकर में जाति के 13 लक्षण माने गए है। शारंगदेव ने भी जाति के 13 लक्षण माने है भरत के 10 जाति लक्षणों को मानते हुए संन्यास,

विन्यास और अंतमार्ग नामक तीन लक्षण शार्ंगदेव ने जोड़ दिये हैं
(नोट - आधुनिक काल में भी जाति के 10 लक्षण माने गए हैं जो इस प्रकार हैं -
ठाठ, आरोह-अवरोह, जाति, वादी-संवादी, आविर्भाव-तिरोभाव, पकड़ न्यास के स्वर, पूर्वांग-उत्तरांग गायन समय, राग का रस,

ग्राम राग वर्गीकरण :-
(यह भी प्राचीन काल के राग वर्गीकरण का है।)

जाति वर्गीकरण के पश्चात ग्राम राग वर्गीकरण का जन्म हुआ। सर्वप्रथम मतंग मुनि द्वारा लिखित बृहद्देशी में, ग्राम राग शब्द का प्रयोग किया गया। ग्राम राग भी जाति या राग के समान सुन्दर और गेय रचनाएँ होती थी। प्राचीन ग्रंथों में 30 ग्राम राग मिलते हैं। अर्थात 18 जातियों में से कुल 30 ग्राम राग उत्पन्न माने गए। मूर्च्छना से जाति और जाति से ग्राम राग उत्पन्न माने गए। इन ग्राम रागों को शुद्ध, भिन्न, गौड़, बेसर तथा साधारण इन 5 जातियों में विभाजित किया गया। शुद्ध में 7, भिन्न में 5, गौड़ में 3, बेसर में 8

और साधारण गीति में 7 ग्राम राग थे। ग्राम राग ही आगे चलकर आधुनिक रागों में विकसित हुए।

शुद्ध, छायालग, और संकीर्ण राग वर्गीकरण :—

(इनका वर्गीकरण प्राचीन काल, मध्यकाल तथा आधुनिक काल तीनों में किया गया। भरत, मतंग, शारंगदेव के ग्रंथो में शुद्ध छायालग, और संकीर्ण राग वर्गीकरण भी हमें मिलता है। ये वर्गीकरण व्यवहार में आज भी परोक्ष या अपरोक्ष रूप में पाया जाता है।

(i) शुद्ध राग :- जिन राग में शास्त्रों के नियमों का प्रयोग होता है उसे शुद्ध राग कहते है। प्राचीन ग्रंथो के अनुसार शास्त्रीय नियमानुसार गाए जाने वाले रंजक राग शुद्ध राग कहलाते है। शुद्ध राग के गायन-वादन में किसी दूसरे राग की आवश्यकता नही पड़ती अपितु पूर्ण रूप अपने ही स्वरों के द्वारा प्रदर्शित होता है।

आतिया बेगम लिखती है- " शुद्ध उन रागों के नाम है जिनके स्वर अपनी मौलिक

NOTES शुद्धता में चले आ रहे हैं।" शुद्ध राग स्वतंत्र होते है। बिलावल और तोड़ी शुद्ध राग के अंतर्गत आते है।

(ii) छायालग राग :- जब कोई राग

दो रागों के मेल से बनता है या जिन रागों के गायन - वादन में दूसरे रागों की छाया आये, वे छायालग राग कहलाते हैं। तिलक और कामोद छायालग राग के अंतर्गत आते हैं।

(iii) संकीर्ण राग :-

संकीर्ण राग, शुद्ध और छायालग रागों के मिश्रण से बनते हैं। जिन रागों में दो से अधिक अर्थात शुद्ध और छायालग रागों का मिश्रण होता है वे संकीर्ण राग कहलाते हैं। पीलू और भैरवी संकीर्ण राग के अंतर्गत आते हैं।

संगीत रत्नाकर का राग वर्गीकरण :-
(दस विधि वर्गीकरण)

- 13वीं शताब्दी में पंडित शार्ङ्गदेव ने अपने ग्रंथ संगीत रत्नाकर में समस्त रागों को 10 वर्गों में विभाजित किया। उनके नाम हैं -

(i) ग्राम-राग (ii) राग (iii) उपराग (iv) भाषा (v) विभाषा (vi) अंतर्भाषा (vii) रागांग (viii) भाषांग (ix) उपांग (x) क्रियांग।

इसमें प्रथम छः वर्ग मार्गी संगीत अथवा "गंधर्व संगीत" के अंतर्गत आते हैं और अंतिम चार (4) "देशी संगीत" या "गान" के अंतर्गत आते हैं।

FEBRUARY MARCH APRIL
SUNDAY 07
NOTES

इसकी विस्तृत व्याख्या किसी भी ग्रंथ में नहीं मिलती है जो कुछ मिलती है वो आपस में एक-दूसरे के विरोधी है इनके विषय में बहुत थोड़ा कहा जा सकता है। इन्हें भिन्न प्रकार से समझा जा सकता है।

ग्राम-राग, राग और उपराग – जैसा कि हम पाते है षड्ज और मध्यम ग्रामों में मूर्च्छना के आधार पर ग्राम राग उत्पन्न माने गए। इनकी संख्या 30 थी। ग्राम राग से ही कुछ अन्य गेय रचनाएँ उत्पन्न हुई जिन्हें राग और उपराग कहा गया। अतः ग्राम-राग" 'राग और उपराग', राग वर्गीकरण के प्रकार थे।
संगीत रत्नाकर में 30 ग्राम रागों 20 रागों और 8 उपरागों का वर्णन मिलता है।

भाषा, विभाषा और अन्तर्भाषा :-
ग्राम राग से उत्पन्न रचनाओ में भाषा राग भी सम्मिलित थे। भाषा
NOTES
से विभाषा राग और विभाषा राग से अन्तर्भाषा राग उत्पन्न माने गए।

Note :- जिन रागों में भाषा शैली

प्रयोग हो भाषा राग कहलाए।
* जिन रागों में विभाषा शैली प्रयोग हो विभाषा राग कहलाए।
* प्राचीन ग्रंथों में भाषा विभाषा और अंतर्भाषा का प्रयोग दो अर्थ में हुआ है
* प्रथम अर्थ के अनुसार - भाषा, विभाषा और अंतर्भाषा, राग की तरह ही विशिष्ट गेय रचना थी। दूसरे अर्थ के अनुसार ये प्राचीन गायन विधि के प्रकार थे।
मतंग मुनि द्वारा लिखित बृहद्देशी में 7 प्रकार की गीतियाँ मानी गई है। जिनमें भाषा और विभाषा सम्मिलित है।
* मतंग ने भाषा के अंतर्गत 10 राग और विभाषा के अंतर्गत 13 राग माने है

मध्यकालीन रागों का वर्गीकरण :-

(1.) मेल राग वर्गीकरण — मध्य काल में मेल राग पद्धति प्रचलित में आई। मेल को 'आधुनिक थाट' का पर्यायवाची कहा गया है जैसे कि आधुनिक काल में थाट-राग पद्धति प्रचलन में है। वैसे ही मध्य काल में 'मेल राग' प्रचलित था। 14वीं शताब्दी में विद्यारण्य ने 15 मेलों के अंतर्गत अपने समय के रागों का वर्गीकरण किया। कवि लोचन ने 12 मेलों के अंतर्गत 75 रागों को रखा। रामामत्य ने मेल-संख्या 20 मानी और उसके अंतर्गत 61 रागों का वर्गीकरण किया।

पंडित व्यंकटमुखी ने गणित के हिसाब से 72 मेलों की रचना की और उनमें 19 मेल लेकर 55 रागों का वर्गीकरण किया।

पुण्डरीक विट्ठल ने एक ओर तो मेल-राग वर्गीकरण का उल्लेख किया और दूसरी ओर राग-रागिणी पद्धति का उल्लेख किया है जिससे स्पष्ट है कि मध्यकाल में ही राग-रागिनी पद्धति प्रचलित में आया।

मध्यकालीन मेल राग का वर्गीकरण- प्राचीन मूर्च्छना वर्गीकरण का विकसित रूप था।

(2.) राग रागिनी वर्गीकरण :- इस पद्धति के मूल में धार्मिक भावना है। 5 रागों की उत्पत्ति भगवान शंकर से और छठे राग की उत्पत्ति पार्वती से हुई ऐसा माना गया है। इस प्रकार जिन रागों में पुरुषत्व की झलक दिखाई दी उन्हें राग और जिन रागों में स्त्रीत्व की झलक दिखाई दी उन्हें रागिनी माना। राग - रागिनी प्रथा को जन्म दिया।

मध्यकाल में राग-रागिनी प्रथा का प्रचलन सर्वत्र हो गया था। राग-रागिनी वर्गीकरण के अंतर्गत मुख्य 6 राग, प्रत्येक राग की 6-6 रागिनियाँ मानी गईं। प्रत्येक रागिनी के 8-8 पुत्र और 8-8 पुत्र-वधुएँ मानी गईं। परन्तु इनमें भी मत एक ना रहा और और मुख्य 4 मत हो गए।

(a) शिव मत - इस मत वाले श्री, वसंत, पंचम, भैरव, मेघ और नारायण छः मुख्य राग मानते थे, प्रत्येक राग की 6-6 रागिनियाँ, 8-8 पुत्र और 8-8 पुत्रवधुएँ मानते थे।

NOTES

राग	प्रत्येक राग की 6 रागिनियाँ					
1. श्री	मालवी	त्रिवेणी	गौरी	केदार	मधुमाधवी	पहाड़िका
2. वसंत	देसी	देवगिरी	बराटी	तोड़ी	ललिता	हिंडोल
3. पंचम	विभास	भूपाली	कर्णाटी	बडहंसिका	मालती	पटमंजरी

Hope is a good breakfast, but it is a bad supper. – Francis Bacon

राग						
4. मेघ	मल्लारी	सोरठी	सावरी	कौशकी	गंधार	हरशृंगार
5. भैरवी	भैरवी	गुर्जरी	रामकिरी	गुणकिरी	बंगाली	सैंधवी
6 नटनारायण	कामोदी	अभारी	नाटिका	कल्याणी	सारंगी	नट्ट हमीर

(5) कल्लिनाथ मत → कल्लिनाथ मत वाले भी शिवमत के मुख्य 6 रागों को मानते थे। प्रत्येक राग की 6-6 रागनियाँ, 8-8 ~~पुत्र~~ पुत्र और 8-8 पुत्रवधुएँ मानते थे। परन्तु उनकी रागनियाँ, पुत्र-पुत्रवधुएँ शिवमत वालों से भिन्न थीं।

राग						
1. श्री	गौरी	कोलाहल	धवला	नरोराजी	मालकौंस	गौड़ र
2. पंचम	त्रिवेणी	हस्ततरेताऽ	अहीरी	कोकभ	वेरारी	असावरी
3. भैरवी	भैरवी	गुजरी	बिलावल	बिहाग	कर्नाटी	कानड़ा
4. मेघ	बंगाली	मधुरा	कामोद	धनाश्री	देवतीर्थ	बिभास
5. नट नारायण	त्रिवेणी	तिलंगी	पूर्वी	गांधारी	राम	सिंध मल्लारी
6. वसंत	अंधाली	गुणकली	पटमंजरी	गौड़गिरी	धांकी	देवशाग

(6) भरत मत :-

NOTES

इस मतानुसार भैरव मालकौंस हिंडोल, दीपक, श्री और मेघ मुख्य 6 राग थे। प्रत्येक राग की पाँच-पाँच रागनियाँ, 8-8 पुत्र राग और 8-8 पुत्र वधुएँ मानी जाती थीं।

प्रत्येक राग की 5 रागिनियाँ

राग					
1. भैरव	मधुमाधवी	ललिता	बराटी	भैरवी	बहुली
2. मालकौंस	गुजरी	विधावती	तोड़ी	खंबावती	ककुभ
3. हिंडोल	रामकली	मालवी	आसावरी	देवारी	केकी
4. दीपक	केदारी	गौरा	रुद्रावती	कामोद	गुजरी
5. श्री	सैंधवी	काफी	ठुमरी	विचित्रा	सोहनी
6. मेघ	मल्लारी	सारंगा	देशी	रतिवल्लभा	कानरा

4. हनुमत मत :- इसके 6 राग भरत वालों के समान थे। प्रत्येक राग की 5-5 रागिनियाँ और 8-8 पुत्र राग भरत मत वालों से भिन्न थे। इस मत वालों ने पुत्र-वधुएँ नहीं मानी।

राग	प्रत्येक राग के 5 रागिनियाँ				
1. भैरव	बंगाली	सैंधवी	भैरवी	बराटी	मधुमाधवी
2. मालकौंस	तोड़ी	गुणकारी	गौरी	खंबावती	ककुभा
3. हिंडोल	रामकली	देसाख	ललित	बिलावली	पटमंजरी
4. दीपक	देसी	कामोदी	केदारी	कानड़ा	नाटि
5. श्री	मालश्री	आसावरी	धनाश्री	वसंती	मारवा
6. मेघ	टनक	मल्लारी	गुजारी	भोपाली	देशकार

SUNDAY 14

Note: शिव मत को मानने वाले के लिए - दामोदर पंडित - 'संगीत-दर्पण' ग्रंथ महत्वपूर्ण माना जाता है। शिव-मत व कल्लिनाथ मत में राग की रागिनियाँ अर्थात 6 राग 36 रागिनियाँ मानी गई। भरत मत तथा हनुमत मत छः राग

NOTES

और प्रत्येक राग की 5 रागनियाँ अर्थात 6 राग और 30 रागनियाँ मानी

② मोहम्मद रजा मत -

सर्वप्रथम पटना के मुहम्मद रजा ने अपनी पुस्तक 'नगमाते आसफी' में सन् 1813 में उपर्युक्त चारों मतों की आलोचना की। उन्होंने तत्कालीन राग-रागिनी पद्धति को अवैज्ञानिक सिद्ध किया और एक नए वर्गीकरण की खोज की। काफी के स्थान पर बिलावल को शुद्ध थाट माना गया किंतु स्वयं राग-रागनी के पद्धति के बाहर नहीं जा सके। उन्होंने राग-रागिनियों के स्वरों में सामंजस्य करते हुए हनुमंत मत से मिलते-जुलते 6 राग 36 रागिनियों की खोज निकाली। यह पद्धति केवल कुछ समय तक ही प्रचलित रही। इनके राग-रागिनियों में कुछ समानता आवश्य रही है।

- मुहम्मद रजा के 6 राग 36 रागिनियाँ

राग						
भैरव	भैरवी	रामकली	गुजरी	खट	गंधारी	
मालकौंस	बागेश्वरी	तोड़ी	देश	सुघराई	सूहा	
हिंडोल	पूरिया	बसंत	ललित	पंचम	धनाश्री	मारवा
श्री	गौरी	पूर्वी	गौरा	त्रिवेणी	मालश्री	जैवानी
मेघ	मधुमाध	गौड़	शुद्ध	बड़हंस	सामंत	सोरठ
नट	छायानट	हमीर	कल्याण	केदार	[illegible] गौड़	यमन

NOTES
War is never a lasting solution for any problem. – A.P.J. Abdul Kalam

राग-रागिनी पद्धति की आलोचना :-

(1) किसी को राग, किसी को रागिनी तथा किसी को पुत्र राग मानने का कोई आधार नहीं था। अपनी-अपनी कल्पना और इच्छा के अनुसार किसी को राग, रागिनी अथवा पुत्र माना गया।

(2) किस आधार पर मुख्य 6 राग माने गए तथा इनकी संख्या 6 ही क्यों मानी गई? न कम और न ज्यादा ऐसा कोई वर्णन नहीं है।

(3) प्रत्येक राग की 6-6 अथवा 5-5 ही रागिनियाँ क्यों मानी गई, कम या अधिक भी मानी जा सकती थी

(4) अगर 6 रागिनियाँ मानी भी गई तो कुछ विशिष्ट रागनियाँ किसी अमुक राग की ही क्यों मानी गई जैसे - उदाहरण के लिए हनुमान मत के अनुसार भैरव की रागनियाँ भैरवी, बराटी ही क्यों मानी गई? अन्य नहीं, इस प्रकार अनेक कमियाँ सामने आईं जिनका

NOTES

उचित जवाब नहीं मिलता।

(5) पुत्र रागों की बहुएँ तो मान ली गई किंतु बहुओं की वंश का कोई अता-पता नहीं।

6. रागों के वंशावली का कोई अता-पता नहीं। आज यह बताना कठिन है कि राग-रागिनी पद्धति में स्वर साम्य, स्वरूप साम्य दोनों को ध्यान में रखा जाता था या नहीं क्योंकि मध्यकालीन राग-रागिनियाँ आधुनिक रागों से भिन्न हैं जैसे मालकौंस राग की एक रागिनी तोड़ी है। परन्तु आधुनिक काल में मालकौंस और तोड़ी के स्वरों देखें तो वो किसी भी श्रेणी में नहीं आते।

आधुनिक रागों के नाम से मध्यकालीन मध्यकालीन नाम मिलते है परन्तु स्वरावलियाँ भिन्न है।

इन सब कारणों से या आधुनिक काल में राग का स्वरूप बदल जाने से राग-रागिनी पद्धतियों का कोई शास्त्रीय आधार न मिलने से राग-रागिनी पद्धति अवैज्ञानिक है और न्याय-असंगत प्रतीत होती है।

आधुनिक कालीन रागों का वर्गीकरण

1. शुद्ध, छायालग और संकीर्ण वर्गीकरण
आधुनिक काल में यह विभाजन नाम मात्र के लिए शेष रहा।
2. राग- रागिनी वर्गीकरण :-
कुछ पुराने संगीतज्ञ इसी विभाजन को मान्यता देते है, किन्तु यह वर्गीकरण समय के साथ तेजी से कम होता जा रहा है।
3. रागांग वर्गीकरण :-
इस पद्धति के अनुसार मुख्य 30 राग माने गए है, जिन्हें रागांग कहते है, इन्ही 30 रागांगो के अंतर्गत अन्य प्रचलित राग गाए व बजाए जाते है अर्थात इन 30 रागों का स्वरूप इनसे संबंधित अन्य रागों में पाया जाता है इसलिए इन्हे अंग राग कहा गया है। उदाहरणार्थ - राग जयजयवंती, बागेश्री अथवा देश के अंग से गाया- बजाया जाता है।
कुछ दिनों पूर्व बंबई के स्व नारायण मोरेश्वर खरे ने 30 रागांग के अंतर्गत सभी रागों को विभाजित किया। समस्त रागों का सूक्षम(सूक्ष्म निरीक्षण करने के बाद उन्होंने 30 स्वर समुदाय चुने,

NOTES

जैसे - ग म रे सा आदि। ये स्वर जिनमें सबसे आधुनिक प्रमुख थे उसी नाम से उस रागांग को पुकारा। जैसे - पहले स्वर समुदाय को बिलावल और दूसरे को भैरव रागांग की संज्ञा दी। इस वर्गीकरण

में स्वर साम्य की तुलना में स्वरूप-साम्य का अधिक ध्यान रखा गया। रागांग की संख्या अधिक और वर्गीकरण कुछ जटिल होने के कारण यह प्रचार में नहीं आ सका। मुख्य रागांग इस प्रकार है-
भैरव, भैरवी, कल्याण, बिलावल, खमाज, काफी, भटियार, पूर्वी, मारवा, तोड़ी, सारंग, भीम पलासी, आसावरी, ललित, पीलू, सोरठ, बिभास, भूपाली, नट, शंकरा, श्री, बागेश्री, केदार, कानहड़ा, मल्हार, हिंडोल, बिहाग, कामोद, आसा, दुर्गा,

5. थाट राग वर्गीकरण :-
(जनक जन्य पद्धति)

मध्यकालीन मेल पद्धति में मेल संख्या में विभिन्न मत-मतांतर होने से यह पद्धति अधिक देर तक प्रचलित न रह सकी। परन्तु आधुनिक थाट पद्धति, मेल पद्धति का ही अनुकरण है

आधुनिक थाट शब्द मेल का ही पर्यायवाची है और थाट की परिभाषा भी वही है जो मेल की है

पंडित भातखंडे ने पं. व्यंकटमुखी के मान्य 72 थाटों में से 10 थाटों को चुना और हमारे यहाँ जितने भी राग गाए-बजाए जाते थे। उन सबके स्वरों और अंग प्रयोगों को देखकर उन्हें जिस थाट में रखा जा सका था, रख दिया।

NOTES

रागों का वर्गीकरण करते हुए उन्होंने तीन बातों को ध्यान में रखा। राग के कोमल और तीव्र स्वरों को देख कर, दूसरा राग के अंगों को देखकर, तीसरा की प्रकृति को देख कर। इसी प्रकार अन्य रागों को भी उनसे संबंधित थाटों के अंतर्गत रखा। इन दस थाटों के नाम और स्वर इस प्रकार है-

थाट नाम	स्वर
1. बिलावल	सा रे गा म प धा नि सां
2. कल्याण	सा रे गा मं प धा नि
3. खमाज	सा रे गा म प धा नि॒
4. काफी	सा रे ग॒ म प ध नि॒
5. आसावरी	सा रे ग॒ म प ध॒ नि॒
6. भैरव	सा रे॒ गा म प ध॒ नि
7. भैरवी	सा रे॒ ग॒ म प ध॒ नि॒
8. पूर्वी	सा रे॒ गा मं प ध॒ नि
9. मारवा	सा रे॒ गा मं प ध॒ नि
10. तोड़ी	सा रे॒ ग॒ मं प ध॒ नि

SUNDAY 21

यह रागों का जनक जन्य पद्धति भी कहते हैं। 10 थाटों में से जो 10 सम्पूर्ण राग उत्पन्न होते हैं उनको जनक राग कहा जाता है। तथा जो उनमें से अन्य राग उत्पन्न होते हैं, उन्हें जन्य राग कहते हैं। अतः थाट राग पद्धति का भी दूसरा नाम जनक जन्य पद्धति है।

NOTES

थाट-पद्धति की आलोचना और स्पष्टीकरण

FEBRUARY MARCH APRIL
The moments of ...

3. खमाज थाट में नि है परन्तु इसके जन्य राग देश, तिलककामोद में दोनों निषाद लगते हैं, जैजैवंती में दोनों गंधार और दोनों निषाद लगते हैं।

4. ललित, पटदीप, मधुवंती आदि राग किसी थाट के अंतर्गत नहीं आते। ललित को जबरदस्ती मारवा थाट के अंतर्गत रखा गया है, इसी प्रकार चंद्रकौंस, अहीर भैरव, आदि रागों के साथ भी न्याय नहीं हुआ है।

5. इसमें स्वर-साम्य की तुलना में स्वरूप-साम्य पर आधारित अधिक ध्यान रखा गया है। जैसे - वृंदावनी सारंग को काफी थाट जन्य माना गया है, जबकि स्वर की दृष्टि से इसे खमाज थाट जन्य मानना चाहिए था। इसी प्रकार भूपाली और देशकार दोनों के स्वर एक हैं। परन्तु भूपाली कल्याण थाट जन्य और देशकार को बिलावल थाट जन्य माना गया है क्योंकि भूपाली ज्यादा कल्याण अंग से मिलता है और देशकार बिलावल अंग से परन्तु राग-साम्य और स्वरूप साम्य दोनों का ध्यान रखना आवश्यक है।

NOTES

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि थाट-राग पद्धति आधुनिक समय में महत्वपूर्ण है और उत्तम है,

परन्तु इसमें सुधार की आवश्यकता है। राग वर्गीकरण की ऐसी पद्धति का होना आवश्यक है जिसमें स्वर साम्य और स्वरूप साम्य दोनों का समन्वय हो, नवीन रागों के निर्माण की क्षमता हो एवं प्राचीन रागों और नवीन रागों को आत्मसात् करने की शक्ति हो और राग-वर्गीकरण सरल, स्पष्ट और सुबोध हो।

राग वर्गीकरण

जब एक श्रेणी की चीजों को इकट्ठी करके उसके अलग - अलग वर्ग बनाए जाते है तो उसे वर्गीकरण कहते है जैसे - लाइब्रेरी में अंग्रेजी की किताबें अलग, गणित की किताबे अलग रखी जाती है।

प्राचीन काल से लेकर आज तक रागों के अलग - अलग वर्ग बनाए है। जिसे राग वर्गीकरण कहते हैं। राग वर्गीकरण का क्रम इस प्रकार है

1. जाति वर्गीकरण :- भरत काल में जाति गायन का प्रचार था। कुल जातियाँ 18 थी। "स्वरों की वह विशेष रचना जिसमें 10 लक्षण माने जाते हो वह रचना जाति कहलाती थी।"

2. ग्राम राग वर्गीकरण : -
ग्राम रागों की उत्पत्ति जातियों से हुई। ग्राम रागों के 5 प्रकार हैं। जिसकी अपनी - अपनी शैली है। जिसको "गीति कहते हैं

NOTES

3. देसि विधि राग वर्गीकरण : -
पं॰ शारंगदेव जी द्वारा रचित ग्रंथ 'संगीत रत्नाकर" में सभी गाई जाने वाली रचनाओं को 10 भागों में

बोला गया है।

1. राग 2. ग्राम राग 3. उप-राग
4. भाषा 5. विभाषा 6. अंतर्भाषा
7. रागांग 8. क्रियांग 9. उपांग
10. भाषांग

5. (क) शुद्ध (ख) छायालग और (ग) संकीर्ण वर्गीकरण :- इन तीन वर्गों में रागों को विभाजित करने की प्रथा चली आ रही थी

(क) शुद्ध राग - जिन रागों में शास्त्र के अनुसार नियमों का प्रयोग शुद्ध रूप से होता है। यह राग स्वतंत्र रहते हैं। जैसे राग भैरव आदि।

(ख) छायालग :- जिन रागों में किसी दूसरे रागों की छाया लगती (आती) है उन्हें छायालग राग कहते हैं

(ग.) संकीर्ण राग :- जिन रागों में दो से अधिक रागों का मिश्रण हो उन्हें संकीर्ण राग कहते हैं।

NOTES 5. मेल राग वर्गीकरण :- मध्यकाल में मेल राग प्रचलित था परन्तु उस समय मेल रागों की संख्या पर संगीतकारों का एक मत नहीं था जिस कारण यह वर्गीकरण कुछ देर बाद खत्म गया

...not until the goal is reached. – Swami Vivekananda

6. राग-रागिनी वर्गीकरण :- मध्यकाल में मेल राग वर्गीकरण के साथ-साथ राग-रागिनी वर्गीकरण भी प्रचार में थी। इस में सभी रागों को 6 पुरुष रागों, उनकी 30 और 36 रागिनियों, उनके 8 पुत्रों और पुत्रवधुओं में बाँटा गया।

7. रागांग वर्गीकरण :- राग-रागिनी वर्गीकरण के बाद रागांग वर्गीकरण प्रचार में आया परन्तु बहुत सी कमियों के कारण प्रचार में ज्यादा समय नहीं रहा।

8. थाट राग वर्गीकरण :-
इसका श्रेय पं० भातखंडे जी को प्राप्त है जिन्होंने मध्य काल के मेल राग वर्गीकरण के आधार पर हमारी संगीत पद्धति को नियम बद्ध किया। मेल के स्थान पर थाट ~~का~~ शब्द का प्रयोग किया। ये 10 थाट इस प्रकार हैं

(क) बिलावल थाट - सभी स्वर शुद्ध
(ख) खमाज - नी कोमल
(ग) काफी - ग, नी कोमल
(घ) आसावरी - ग, ध नी कोमल
(ङ) भैरवी - रे, ग, ध, नि कोमल
(च) भैरव - रे, ध कोमल
(छ) कल्याण - म' तीव्र
(ज) मारवा - रे कोमल म' तीव्र
(झ) पूर्वी - रे, ध कोमल म' तीव्र
(ञ) तोड़ी - रे ग ध कोमल म' तीव्र

SUNDAY 28
FEBRUARY MARCH APRIL
NOTES
You must be the change you want to see in the world. – Mahatma Gandhi

फिर भी कुछ राग जैसे - मधुवंती, ललित आदि किसी भी थाट में नहीं आते चाहे यह वर्गीकरण आज के युग में बहुत लाभकारी है।

जाति - गायन :-

जाति गायन संगीत की प्राचीन परंपरा है। और इसका वर्णन सबसे पहले हमारे पंचम वेद नाट्य शास्त्र में किया गया है नाट्यशास्त्र के रचनाकार भरत रहे है। नाट्यशास्त्र एक ऐसा शास्त्र है जिसमें कला के हर क्षेत्र का वर्णन है।

जाति गायन प्राचीन समय का एक प्रकार है जो उस समय प्रचलित था। जाति गायन जो है वें है जिसका स्वरूप आगे चलकर राग गायन में मिलता है तो हम कह सकते कि जाति गायन में विकार आने से राग गायन बना।

भरत मुनि नें नाट्यशास्त्र में 18 जातियों का वर्णन किया, इन 18 जातियों को भरत मुनि ने 7 षड्ज ग्राम के अंतर्गत जातियों का वर्णन किया और 11 मध्यम ग्राम के अंतर्गत वर्णन किया जो षड्ज ग्राम के अन्तर्गत 7 जातियाँ है वें है

1. षाड्जी 2. आर्षभी
3. धैवती 4. नैषादी
5. षड्जोदीच्यवती
6. षड्जकैशिकी
7. षड्ज मध्या

मध्यम ग्राम के अंतर्गत 11 जातियाँ:-

1. गांधारी 2. मध्यमा
3. गान्धारोदीच्यवा 4. पञ्चमी
5. रक्त गान्धारी 6. गान्धारपंचमी
7. मध्यमोदीच्यवा 8. नन्दयंती
9. कार्मारवी 10. आन्ध्री
11. कैशिकी

जाति गायन के 10 लक्षण माने है।

1. अंश स्वर :- यानि प्रारंभिक स्वर जहाँ से शुरुआत की जाति है और इस स्वर को प्राण स्वर या जीव स्वर भी कहते है वाद्य के लिए इसे स्थायी स्वर कहते है और यहीं से जो सबसे पहला जो स्वर लगाया जाता है यानि जो गायन या वादन में सबसे पहला स्वर लगाते है उसको अंश स्वर कहते है यदि वीणा से या सितार से उसकी तुलना करें तो पिंड की जो तारें होती है उसे चिकारी कहा जाता है और इन चिकारियों में जो स्वर है उसको पहले ही स्थापित किया

जाता है। जो बदलता नही है वह स्थाई होता है बाहुत्य के इसी स्वर से अनवस्य बाहुत्य मिलाये जाते है

2. ग्रह स्वर :-

जब हम सर्वप्रथम गायन शुरु करते है कि कोशिश रहती है कि हम गायन सा से प्रारंभ करे तो सा को ही हम अंश स्वर या ग्रह स्वर कहते है भरत मुनि के अनुसार

3. तार :- यानि तार सप्तक जिस जाति में उस जाति का विस्तार तार में कितना होगा तार सप्तक में जाति का गायन कितना होगा या किस प्रकार होगा या कौन सी स्वर किस प्रकार से ली जायेगी।

4. मन्द्र :-

जाति का गायन मन्द्र में कैसे होगा? कितना होगा? ये लक्षण इसके अंतर्गत आते हैं यानि मध्य सप्तक से जो नीचे का सप्तक है उसे मन्द्र सप्तक कहते है

5. न्यास :-

5. न्यास का अर्थ है ठहरना, तो किस स्वर पर न्यास होगा। गीत के अंतिम स्वर जहाँ पर गायन समाप्त होता है उसे न्यास कहते हैं। कुल संख्या 21

6. अपन्यास :- कुल संख्या 56 है।
गायन या गीत का मध्यभाग जहाँ पर अल्प समय के लिए रुका जाता है अपन्यास कहलाता है।

7. अल्पत्व :- जिस स्वर को कम लिया जाता है तो वह अल्प कहा जाता है यह दो हैं लंघन और कम अभ्यास
लंघन - जिस स्वर को छोड़कर आगे बढ़ते हैं।
अभ्यास कमी :- जिस स्वर को हलका सा स्पर्श करते हुए आगे बढ़ते हैं

8. बहुत्व :- जिस स्वर का बहुत ज्यादा प्रयोग किया जाय यानि इस स्वर का प्रयोग करना ही करना।

NOTES

(9) औड़व :- इसका अर्थ है जाति में पाँच स्वरों का प्रयोग हो रहा है या कोई और स्वर उपयोग हो रहा है

10. षाड़व :- जिस जाति में 6 स्वरों का

If you don't like how things are, change it! You're not a tree. – Jim Rohn

प्रयोग हो उसे काइव कहते हैं।
गीत की पंक्तियां :-

ग्रह . . . . विन्यास
. . . . संन्यास
. . . .
. . . . अपन्यास
. . . .
. . . . न्यास (अंत)

राग :- स्वर और वर्ण से विभूषित ऐसी रचना जो चित्त का रंजन करे।

रागों के निम्न लक्षण हैं
1. ठाठ/थाट 2. आरोह-अवरोह
3. जाति 4. वादी-संवादी
5. पकड़ 6. न्यास
7. पूर्वांग-उत्तरांग 8. गायन-समय

04 SUNDAY

9. आविर्भाव-तिरोभाव
10. राग का रस

1. थाट - जिस स्वर समूह से राग जन्म लेता है थाट कहलाता है जैसे राग - भैरव, इसका जन्म भैरव थाट से हुआ है, भैरव थाट में रे तथा ध कोमल है और बाकि स्वर शुद्ध हैं इससे मिलता जुलता रागों को इस थाट के अंतर्गत रखा गया है

NOTES

राग :-

राग :- कम से कम 5 और अधिक से अधिक 7 स्वरों की वह सुन्दर रचना जो कानों को सुनने में अच्छी लगे उसे राग कहते हैं। दूसरे शब्दों में "स्वर और वर्ण से विभूषित रचना या ध्वनि जो मनुष्यों का मनोरंजन या मनुष्यों को सुनने में अच्छी लगे उसे राग कहते हैं"

बृहद्देशी, मतंग मुनि द्वारा रचित ग्रंथ में कहा है-
योऽयं ध्वनि विशेषस्तु स्वरवर्ण विभूषितः।
रंजको जनचित्तानां सच राग:
उदाहृतः। मतंग - बृहद्देशी श्लोक 280।

अर्थात् "ध्वनि की वह विशेष रचना जिसको स्वरों तथा वर्णों द्वारा विभूषित किया गया हो और सुनने वालों के चित्त (मन) को मोह ले राग कहलाती है।

राग से विभिन्न रसों की अनुभूति होती है।

राग के लक्षण :-

प्राचीन काल में राग के 10 लक्षण या नियम माने जाते थे। इसलिए प्रत्येक राग को उन नियमों के अनुसार गाना पड़ता था तथा नियमों के विरुद्ध राग अशुद्ध माना जाता था। राग के प्राचीन

NOTES

10 लक्षण या नियम इस प्रकार हैं :- 1. ग्रह 2. अंश 3. न्यास
4. उपन्यास 5. षाड़वत्व
6. औड़वत्व 7. अल्पत्व
8. बहुत्व 9. मन्द्र 10. तार

रागों के लक्षण :-

1. राग की पहली विशेषता उसकी रंजकता है प्रत्येक राग में रंजकता आवश्य होनी चाहिए।

2. राग में कम-से-कम 5 स्वर और अधिक-से-अधिक 7 स्वर होने चाहिए

3. प्रत्येक राग का कोई ना कोई थाट आवश्य होना चाहिए। जैसे- भूपाली राग का कल्याण थाट

4. किसी भी राग में सा कभी वर्जित नही होता है क्योंकि सा सप्तक का आधार स्वर होता है।

5. राग में म और प मे से एक स्वर राग में आवश्य होना चाहिए क्योंकि म और प एक साथ वर्जित नहीं होते।

6. रागों में आरोह - अवरोह, पकड़, वादी सम्वादी स्वर आवश्य होना चाहिए।

7. प्रत्येक राग का गायन समय होना चाहिए

8. किसी भी राग में दोनों स्वर एक बाद एक नहीं प्रयोग किये जाते, जैसे ग के बाद सीधे कोमल ग को नही गाया जाता है

NOTES

ग्राम –

ग्राम –

प्राचीन संगीत में प्रचलित ग्राम को आधुनिक भारतीय संगीत का सप्तक और पाश्चात्य संगीत का स्केल कहा जाता है

डा० श्रीधर पराजँपे जी के मतानुसार "सात स्वरों की मुलभूत व्यवस्था का नाम ग्राम है अर्थात सात स्वरों का समूह ग्राम है

प्राचीन संगीत - विद्वानों के मत में ग्राम का अर्थ स्वरों का वह समुदाय जिनमें 22 श्रुतियों के अंतर्गत सात शुद्ध स्वर का सम्वादी भाव से व्यवस्थित रहना। आचार्य भरत ने नाट्यशास्त्र में लिखा है - " लोके मानवानां वसतिग्राम उच्यते" तथा "इहापि स्वर मंडलवासति ग्रामिः" अर्थात जिस प्रकार एक ग्राम या गाँव में विभिन्न प्रकार के लोग रहते हैं ठीक उसी प्रकार सात स्वर परस्पर सम्वादित भाव से एक स्थान में रहने के कारण, उसे ग्राम कहा जाता है

7वीं शदी के मतंगमुनि के अनुसार "ग्राम, स्वर और श्रुतियों का समूह है

NOTES

डॉ० मुकुन्द लाठ के अनुसार ग्राम स्वरों के दो समूह हैं जिसमें 22 श्रुतियों का स्वरूप व्यवस्थित रहता है।

नाट्यशास्त्र के टिकाकार आचार्य अभिनव गुप्त के अनुसार - ग्राम, स्वर

स्वर और श्रुतियों का वह समूह है जिसमें मूर्च्छना, वर्ण, अलंकार, आदि का स्वरूप बनता है। प्राचीन ग्राम ही आगे चलकर सप्तक के रूप में प्रचलित हुआ।

भरत मुनि ने दो ग्रामों का उल्लेख किया है।

पंडित शारंगदेव ने तीन ग्रामों का उल्लेख किया है - षड्ज ग्राम, मध्यम ग्राम, गान्धार ग्राम।

षड्ज ग्राम में षड्ज ४ श्रुतियों का, ऋषभ ३ का, गान्धार २ का, मध्यम ४ का, पंचम ४ का, धैवत ३ का और निषाद २ श्रुतियों का होता है। इसलिए चौथी पर सा, सातवीं पर रे, नौवीं पर ग, तेरहवीं पर म, ~~सत्रहवीं~~ सत्रहवीं पर प, बीसवीं पर ध, बाइसवी श्रुति पर नि स्थापित हुआ।

मध्यम ग्राम में पंचम एक श्रुति नीचे आ जाता है अर्थात प की ३ श्रुतियाँ रह जाती है। और धैवत की ४ श्रुतियाँ हो जाति है। शेष स्वर षड्ज ग्राम के समान रहते हैं। इसलिए चौथी पर सा, सातवीं पर रे नौवी पर गं,

NOTES तेरहवीं पर मं, १६ वीं पर प, २०वीं पर ध, और २२वीं पर नि स्थापित हुआ।

षड्ज और मध्यम ग्राम में स्वर-साधारण - षड्ज ग्राम के ~~स्था~~ स्था - प, रे-ध, ग-नी में

षडज - पंचम संवाद और सा-म में षडज-मध्यम संवाद रहता है। मध्यम ग्राम के रे-ध, गा-नी में षडज-पंचम और रे-प, सा-म में षडज-मध्यम सम्वाद रहता है। अन्तर यह है कि षडज ग्राम में सा-प परस्पर संवादी है और मध्यम ग्राम में रे-प। मध्यम ग्राम में सा-प सम्वाद नहीं रहता है।

षडज ग्राम में सा-प और मध्यम ग्राम में रे-प सम्वाद रहता है।

श्रुति सं.	श्रुतिनाम	षडज ग्राम	मध्यम ग्राम	गंधार ग्राम		
1	तीव्रा	-	-	निषाद		
2.	कुमुद्वति					
3.	मंदा					
4.	छंदोवती	षडज	षडज	षडज		
5.	दयावती	.	.	.		
6.	रंजनी	.	.			
7	रक्तिका	ऋषभ	ऋषभ	ऋषभ		
8.	रौद्री	.	.	'		
9	क्रोधा	गंधार	गंधार			
10	वज्रिका	.	.	गंधार		
11	प्रसारिणी					
12	प्रीति					
13	मार्जनी	मध्यम	मध्यम	मध्यम		
14	क्षिति	..	..	..		
15	रक्ता	..	..			
16	संदीपनी	..	पंचम	..		
17	आलापिनी	पंचम				
18.	मदन्ती	..	..	..		
19	रोहिणी					

20. ~~[illegible]~~ रम्या - धैवत धैवत
21. उग्रा .. 22. क्षोभिणी - निषाद निषाद ..

राग-रागिनी-पद्धति

मध्ययुग में रागों को वर्गीकरण करने का प्रमुख माध्यम राग-रागिनी वर्गीकरण था। जैसे - मेल राग या थाट राग वर्गीकरण राग के स्वरों पर मानो शरीर पर केन्द्रित रखती है, वहीं राग-रागिनी वर्गीकरण सम्भवतः राग की आत्मा था। स्वभाव पर आधारित होता है। शरीर की अपेक्षा आत्मा अधिक प्रभावशाली होती है। इसलिए राग-रागिनी के वर्गीकरण काल में रागों का अधिक प्रभाव था। इसमें कुछ रागों को स्त्री और कुछ रागों को पुरुष मानकर रागों की वंश क्रम मानी गई। इसी विचार धारा के ~~करण~~ आधार पर राग-रागिनी पद्धति का जन्म हुआ।

यही भारतीय सृष्टि तत्व का दर्शन है। इसी दृष्टि से रागिनि सृष्टि का विकास हुआ एवं उत्पत्ति हुआ~~?~~ के लिए भी स्त्री-

पुरुष रूप राग-रागिनी सिद्धान्त का व्यवहार संगीत में पाया जाता है। इसी सिद्धांत का प्रभाव राग-रागिनी वर्गीकरण पद्धति ~~के~~ के ग्रंथों में दिखाई देती है। इसमें रागों के पति-पत्नी तथा पुत्र-~~बधू~~ पुत्रवधू आदि मानकर रागों का वर्गीकरण किया गया है। मध्यकालीन

NOTES

अष्टछाप के कवियों ने भी इस वर्गीकरण को माना है स्वरसाम्य के साथ स्वरोच्चारण की समानता तथा चलन समता जैसे कुछ सिद्धांतों का आधार बनाकर इस वर्गीकरण में संशोधन किया गया, परन्तु

प्राचीन परम्परा का सुदृढ़ सहयोग न मिलने से यह व्यवस्था गुणियों में मान्यता प्राप्त नहीं कर सकी।

राग - रागिनी वर्गीकरण की उत्पत्ति व मान्यताएँ →

शिव तथा शक्ति के संयोग से रागों की उत्पत्ति हुई। महादेव के पाँच मुखों से पाँच राग और छठा राग पार्वती के मुख उत्पन्न हुई जो इस प्रकार है —

महादेव के मुख से निकले राग →

1. पूर्व मुख से - भैरव राग
2. पश्चिम मुख से - हिण्डोल राग
3. उत्तर मुख से - मेघ राग
4. दक्षिण मुख से - दीपक राग
5. आकाशोन्मुख से - श्री राग

पार्वती के मुख से निकले राग →

1. कौशिक राग

राग - रागिनी पद्धति उत्तर एवं दक्षिण दोनों संगीत में प्रचलित है

संगीत मकरन्द में पुरुष राग, स्त्री राग और नपुंसक राग आदि का विभाजन मिलता है तथा इनका संबंध रौद्र, वीर, शृंगार, हास्य, करुण, भयानक, वीभत्स एवं शांत रसों से जोड़ा गया है।
इस ग्रंथ में ताल की विभिन्न सप्त नाद को

NOTES
All the information you need can be given in dialogue. – Elmore Leonard

शिव रूप एवं गीतों को प्रभाव भ्रमरूप बताया गया है।

संगीत दर्पण- राग-रागिनी वर्गीकरण का प्रसिद्ध ग्रन्थ स्वीकार किया जाता है। इसमें शिव शक्ति के संयोग से राग की उत्पत्ति निम्न प्रकार बताई गई है।

1. अद्योवक्त्र मुख से - श्री राग
2. वामदेवमुख से - वसंत राग
3. अघोर मुख से - भैरव राग
4. तत्पुरुष मुख से - पंचम राग
5. ईशान मुख से - मेघ राग

लास्य नृत्य के प्रसंग से पार्वती के मुख से नटनारायण राग अवतरित हुए हैं।

राग- रागिनी वर्गीकरण के अनेक मत :- 1. नारद मत 2. मेघ कर्ण मत
3. सोमेश्वर या शिव मत
4. भरत मत 5. रागार्णव मत
6. हनुमत मत 7. कल्लिनाथ मत
8. पुण्डरिक विट्ठल मत
9. अबुल- फजल मत

NOTES इन सभी मतों में से चार मत अधिक प्रचार में रहा।

शिवमत या सोमेश्वर मत, कल्लिनाथ मत, हनुमत मत तथा भरत मत। शिवमत को मानने वालों के लिए दामोदर कृत संगीत

Reading is a basic tool in the living of a good life

दर्पण नामक ग्रन्थ महत्वपूर्ण है। शिवमत और कल्लिनाथ मत दोनों में 6 मुख्य राग एवं 36 रागिनियाँ अर्थात् एक राग की 6-6 रागिनियाँ मानी गई है। तथा भरत एवं हनुमत मत दोनों 6 मुख्य राग 30 रागिनियाँ अर्थात् प्रत्येक राग की 5-5 रागिनियाँ मानी गई है। शिवमत एवं कल्लिनाथ मत के राग समान हैं परन्तु रागिनियाँ भिन्न-भिन्न मानी गई है इसी प्रकार हनुमत मत तथा भरत मत के राग समान तथा रागिनिया भिन्न है

1. शिवमत → 6 राग और 36 रागिनियाँ
प्रत्येक राग की 6-6 रागिनियाँ

(क) श्री - मालश्री, त्रिवेणी, गौरी, केदार, मधुमाधवी, पहाड़िका।

(ख) बसन्त - देशी, देवगिरी, बराटी, तोड़िका, ललिता, हिंदोली

(ग) भैरव - भैरवी, गुजरी, रामकिरी, गुणकिरी, बंगाली सैंधवी,

(घ) पंचम - विभाषा, भूपाली, कर्णाटी, बड़हंसिका, मालवी पटमंजरी

(ङ) वृहन्नाट - कामोदी, कल्याणी, आभीरी, नाटिका, सारंगी, नट्ट हम्बीरा।

(च) मेघ - मल्लारी, सोरठी, सावेरी, कौशिकी, गांधारी, हरश्रृंगार।

2. हनुमत मत :- 6 राग और 30 रागिनियाँ
प्रत्येक राग की - 5-5 रागिनियाँ
(क) भैरव - मध्यमादि, भैरवी, बंगाली, बराटिका, सैंधवी
(ख) कौशिक - तोड़ी, खम्बाती, गौरी, गुणक्री ककुभ।
(ग) हिंदोल - वेलावली, रामकिरी, देशाख्या, पटमंजरी, ललित
(घ) दीपक - केदारी, कानड़ा, देशी, कामोदी, नाटिका।
(ङ) श्री - वसन्ती, मालवी, मालश्री, धनासिका, आसावरी
(च) मेघ - मल्लारी, देशकारी, भूपाली, गुर्जरी, टंका

3. कल्लिनाथ मत / कृष्ण मत -
6 राग और 36 रागिनियाँ
(क) श्री - गौरी, कोलाहल, त्रिवेणी, गौरी, ~~केदारी, मधुमाधवी, पहाड़िका।~~
~~(ख) वसन्त -~~ धवल, वरोराजी, मालकोश, देवगांधार,
(ख) वसन्त - अन्धाली, गुणकली, पटमंजरी, गौंडगिरी, धांकी, देवसाग
NOTES (ग) भैरव - भैरवी, गुर्जरी, बिलावली, बिहाग, कर्नाट, कानड़ा
(घ) पंचम - त्रिवेणी, हस्ततरेतहा, अहीरी, कोकभ, बेरारी, आसावरी।

(ग) नटनारायण :- तिलक्की, त्रिलंगी, पूर्वी, गाँधारी, रामा, सिंधु, मल्लारी।
(घ) मेघ - बँगाली, मधुरा, कामोद, धनाश्री देवतीर्थी, दिवाली।

५: भरत मत - 6 राग और 30 रागिनियाँ
(क) भैरव - मधुमाधवी, ललिता, बरोरी, भैरवी, बहुली
(ख) मालकौश - गुर्जरी, विधावती, तोड़ी, खम्बावती, ककुभ
(ग) हिंडोल - रामकली, मालवी, आसावरी, देवरी, केकी
(घ) दीपक - केदारी, गौरी, रुद्रावती, कामोद गुर्जरी।
(ङ) श्री - सैंधवी, काफी, ठुमरी, विचित्रा सोहनी
(च) मेघ - मल्लारी, सारंग, देशी, रतिवल्लभा, कानरा

सर्वप्रथम पटना के मुहम्मद रजा ने अपनी पुस्तक 'नगमाते आसफी' में सन 1813 उपर्युक्त चारों मतों की आलोचना की। उन्होंने तत्कालीन राग - ~~रागिनियां रागिनी~~ रागिनी पद्धति को अवैज्ञानिक सिद्ध किया और एक नये वर्गीकरण की खोज में लग गये, किन्तु स्वयं राग - रागिनी पद्धति के बाहर नहीं जा सके। उन्होंने राग और राग और रागिनियों में साम्य जस्य

NOTES

Declare the past, diagnose the present, foretell the future. – Hippocrates

स्थापित करते हुए ~~हनुमान~~ हनुमान मत से मिलते-जुलते 6 राग और 36 रागिनियों की नई पद्धति बनाई। यह पद्धति केवल कुछ समय तक ~~चलती~~ प्रचलित रही। उनकी राग-रागिनियों में कुछ समता अवश्य थी। उनकी नवीनता यह थी कि उन्होंने काफी के स्थान पर बिलावल को शुद्ध थाट माना।

मुहम्मद रजा के 6 राग और 36 रागिनियाँ

(क) भैरव - भैरवी, रामकली, गुजरी, खट, गांधारी, आसावरी

(ख) मालकौंस - बागेश्वरी, तोड़ी, देशी, सुघराई, साहू, मुलतानी।

(ग) हिंडोल - पूरिया, बसंत, ललित, पँचम, धनाश्री, मारवा

18 SUNDAY (घ) श्री - गौरी, पूर्वी, गौरा, त्रिवण, मालश्री, जैताश्री

(ङ) मेघ - मधुमाध, गौड़, शुद्धसारंग, बड़हंस, सामन्त सोरठ

(च) नट - छायानट, हमीर, कल्याण, केदार, बिहागड़ा, यमन

उपरोक्त सभी मतों में श्री, भैरव, एव

NOTES मेघ तीनों मुख्य राग माने गए लेकिन बाकी तीनों ~~मत~~ राग किसी मत में समान नहीं है मध्य काल के लिए ~~सम~~ ~~[illegible]~~ राग-रागिनी पद्धति भले ही न्याय संगत रही हो किन्तु आज इस

Be Brave. Take Risks. Nothing ...

पद्धति में न्याय-असंगत की भरमार दिखाई पड़ती है। शायद इसका कारण यह ~~सब~~ लोगों था कि मध्य कालीन राग आधुनिक रागों से पूर्णतया भिन्न थे और पहले शुद्ध थाट काफी था और आज बिलावल माना जाता है।

थाट (मेल) राग

मध्यकालीन राग-रागिनियों के वर्गीकरण को अवैज्ञानिक होते हुए विद्वानों ने मेल-राग वर्गीकरण या थाट-राग वर्गीकरण की प्रणाली अपनाई। दक्षिण संगीत में जिसे 'मेल' कहते हैं उत्तरी संगीत में उसे थाट कहा ~~जाता~~ गया है।

मेल (थाट)-राग वर्गीकरण वस्तुत: प्राचीन मूर्च्छना पद्धति का ही परिवर्तित रूप है। जो स्थान मूर्च्छना पद्धति में मूर्च्छना का था वही स्थान मध्ययुग में मेल ~~का~~ संस्थान या थाट को मिला।

'मेल: स्वरसमूह स्यात् रंगव्यंजक शक्तिमान'

अर्थात् सात स्वरों का वह समूह, जिससे रंजक राग उत्पन्न होते हैं मेल या थाट कहलाते हैं। थाट में भी सात स्वरों का क्रमानुसार प्रयोग होता है। तथा रंजक रागों की उत्पत्ति कारक होता है। अत: मेल (थाट) राग प्रचलित हुआ।

मध्यकालीन राग-रागिनी वर्गीकरण के साथ ही मेल (थाट) राग वर्गीकरण का उदय ~~हुआ~~ हो चुका था। मेल पद्धति का कार्य स्थल दक्षिण भारतीय संगीत में था। डॉ० श्रीधर शरतचन्द्र परांजपे के अनुसार - 14वीं शताब्दी में विजयनगर राज्य के माधव विद्यारण्य संस्कृत और संगीत के प्रकाण्ड विद्वान थे। उनकी कृति "संगीत सार" के नाम से प्रसिद्ध है।

इन्हें दक्षिणात्य संगीत में मेल पद्धति का प्रवर्तक माना जाता है। विद्यारण्य का ग्रंथ आज उपलब्ध नहीं है। अतः उनके बाद रामामात्य के ग्रन्थ 'स्वरमेलकलानिधि' को मेल(थाट) पद्धति का आधार माना जाता है। रामामात्य ने अपने समय के प्रचलित रागों को 20 मेलों (थाटों) के अंतर्गत सम्मिलित किया। उसके बाद सोमनाथ ने 23 थाट(मेल) और पंडित व्यंकटमखी ने एक सप्तक के शुद्ध और विकृत 12 स्वरों से गणित द्वारा 72 थाटों की रचना की।

उत्तरी संगीत में पंडित भातखण्डे जी ने व्यंकटमखी के आधार पर 10 थाटों की व्यवस्था करके थाट-राग पद्धति का प्रचलन किया।

थाट पद्धति की विशेषताएँ :-

1. मेल(थाट) पद्धति दक्षिण संगीत की देन है। राग-रागिनी वर्गीकरण में दोष उत्पन्न होने के कारण थाट-राग या मेल-राग वर्गीकरण की रचना की गई।
2. जिन रागों के शुद्ध और विकृत स्वरों में कुछ समानता थी उन्हें एक वर्ग में रखा गया। इस प्रकार के वर्ग को थाट(मेल) की संज्ञा दी गई।
3. एक ही ग्राम या सप्तक में अधिकांश

... the positive. – Matt Cameron

विद्वानों के अनुसार शुद्ध और विकृत 12 स्वरों से थाट बनाए गए। विद्यारण्य ने ~~15 स्वरों~~ 15 थाट, रामामात्य ने 20 थाट, सोमनाथ ने 23 थाटों के अन्तर्गत सभी प्रचलित रागों को सम्मिलित किया। जैसे-जैसे नवीन राग-रूपों का विस्तार होता गया वैसे-वैसे मेलों की संख्या में भी वृद्धि होती चली गई। अंततः पंडित व्यंकटमखी ने गणित के द्वारा 72 थाटों की रचना की, लेकिन व्यवहार में उन्हीं मेलों को स्थान दिया गया जिनसे रंजक रागों की उत्पत्ति हो सके।

इसी गणितीय सिद्धांत के आधार पर उत्तरी संगीत में भी ~~थाट (मेल)~~ थाट (मेल) बनाए गए। जो आज 10 थाटों के रूप में प्रचलित हैं।

4. मेल पद्धति के ग्रंथकार, विद्यारण्य से आरंभ होकर रामामात्य, कविलोचन पुंडरीक-विट्ठल, सोमनाथ और व्यंकटमुखी आदि तक प्रचलित हुई और दक्षिण और उत्तरी संगीत दोनों में प्रचलित है।

NOTES 5. इस थाट-पद्धति को आधुनिक विज्ञान के युग में अधिक वैज्ञानिक और प्रमाणिक माना गया।

→ मेलकर्ता :–

मेलकर्ता :–

शास्त्रीय यह कर्नाटक संगीत (दक्षिण भारतीय संगीत) में मौलिक संगीत स्केल (राग) का एक संग्रह है। मेलकर्ता राग, मूल राग हैं, इसलिए इन्हें जनक राग के रूप में जाना जाता है। जिनसे अन्य राग उत्पन्न हो सकते हैं। मेल कर्ता राग को कभी-कभी मेला, कर्ता या संपूर्ण के रूप में भी संदर्भित किया जाता है संपूर्ण गलत है क्योंकि संपूर्ण राग का मेलकर्ता होना जरूरी नहीं है उदाहरण के लिए राग भैरवी।

हिन्दुस्तानी संगीत में थाट, मेलकर्ता के समकक्ष है हिन्दुस्तानी संगीत में 10 थाट हैं और स्वीकृत मेलकर्ता योजना में 72 राग हैं।

रागों को मेलकर्ता माने जाने के लिए निम्नलिखित विशेषताएं होनी चाहिए।

- वे सम्पूर्ण राग हैं, इनमें आरोही और अवरोही के दोनों स्तरों पर सप्तक के सभी सात स्वर शामिल होते हैं।
- ऊपरी षड्ज को राग पैमाने में रखा गया है। क्योंकि वे निषाद के साथ समाप्त होते हैं
- आरोही और अवरोही पैमाने में समान नोट होने चाहिए।

रागों का मेल प्रणाली सबसे पहले

NOTES

रामामात्य ने अपनी रचना स्वरमेलकलानिधि सन 1550 में प्रतिपादित की थी। रामामात्य को रागों की मेल प्रणाली का जनक माना जाता है।

17 वीं शताब्दी के एक संगीतज्ञ वेंकटमाखिन ने अपनी रचना चतुर्दंडी प्रकाशिका में एक नई प्रणाली की व्याख्या की जिसे आज मेलकर्ता के रूप में जाना जाता है। उस समय ज्ञात ~~स्वरों~~ 12 अक्षर-वर्णों में से 6 स्वरों के द्वैतक मनमाने ढंग से परिभाषित किया जिससे 72 मेलकर्ता रागों की संख्या हुई।

प्रत्येक मेलकर्ता राग का एक अलग स्तर होता है। इस पद्धति में निचले सा, ऊपरी सां और प को निश्चित स्वरों के रूप में माना जाता है। जिसमें म के दो

25 SUNDAY

रूप होते हैं और शेष रे ग, ध और नी के तीन-तीन रूप होते हैं। इससे 72 सात स्वर संयोजन बनते हैं।

वहाँ 12 हैं सप्तक, ~~सप्तक~~ S (सा) के अन्य स्वर हैं, R1 R2 = G1, R3 = R2, G3, M1, M2, P, D1, D2 = N1, D3 = N2, N3। एक मेलकर्ता राग में सा और

NOTES

प, म में से एक, रे और ग में से प्रत्येक एक, और ध और नि में से एक-एक होना आवश्यक है। इसके अलावे रे को ग से पहले और ध को नि से पहले होना चाहिए। इससे

2×6×6 = 72 राग होते है।

जिस राग में मेलकर्ता राग के स्वरों का एक समूह होता है। उसे उस मेलकर्ता राग का जन्य कहा जाता है। हर राग मेलकर्ता राग का जन्य होता है।

72 मेलकर्ता रागों को 12 समूहों में विभाजित किया गया है। जिन्हें चक्र कहा गया है प्रत्येक चक्र में 6 राग होते है चक्र के भीतर राग केवल धं और नि में भिन्न होते है।

1. इंदु चक्र :-

कनकंगी - सा रे ग म प ध नि, सां

रत्नागी - सा रे ग म प ध $नि_2$ सां

गानमूर्ति - सा रे ग म प ध $नि_3$ सां

वनस्पति - सा रे ग म प $ध_2$ नि सां

मानवति - सा रे ग म प $ध_2$ $नि_3$ सां

तनरूपी - सा रे ग म प $ध_3$ $नि_3$ सां

2. नेत्र ~~चक्र~~ चक्र -

सेनावती - सा रे $ग_2$ म प ध नि सां

हनुमतोड़ी - सा रे $ग_2$ म प ध $नि_2$ सां

धेनुका - सा रे $ग_2$ म प ध $नि_3$ सां

नाटकप्रिय - सा रे $ग_2$ म प $ध_3$ $नि_2$ सां

NOTES ~~~~

कोकिलाप्रिया - सा रे $ग_2$ म प $ध_2$ $नि_3$ सां

रूपवती - सा रे $ग_2$ म प $ध_3$ $नि_3$ सां

3. अग्नि चक्र -

ગાયકપ્રિયા - સા રે $ગ_3$ મ પ ધ નિ સાં

વકુળાભરણમ્ - સા રે $ગ_3$ મ પ ધ $નિ_2$ સાં

માયામાલવગૌળ - સા રે $ગ_3$ મ પ ધ $નિ_3$ સાં

ચક્રવાકં - સા રે $ગ_3$ મ પ $ધ_2$ નિ સાં

સૂર્યકાંત - સા રે $ગ_3$ મ પ $ધ_2$ $નિ_3$ સાં

रागांग :-

रागांग :- राग वर्गीकरण आधुनिक समय का बनाया हुआ वर्गीकरण है। इस वर्गीकरण का जनक नारायण मोरेश्वर खरे को माना जाता है। रागांग का अर्थ है ऐसा समूह जो किसी राग की विशेषता प्रदान करता हो। यह उस राग का मुख्य अंग होता है। जब यह स्वर समूह अन्य रागों में लगता है तो यह नए नए रागों को जन्म देता है।

उदाहरण :- भैरव राग का मुख्य अंग कोमल रे और कोमल ध पर आंदोलन है ये आंदोलन युक्त स्वर भैरव के रागांग कहलाते है। इसी प्रकार रे और प से ली गई मींड युक्त ध्वनि मल्हार का मुख्य अंग अर्थात रागांग है।

इसी रागांग को ध्यान में रखते हुए नारायण मोरेश्वर खरे ने 30 रागांग चुने। इन रागांगों के आधार पर रागों को वर्गीकृत किया, जैसे जिन रागों में म ग रे सा (ग अतिकोमल) लगता हो वह कान्हड़ा के अंतर्गत आते हैं, जैसे नायकी कान्हड़ा, दरबारी कान्हड़ा, कौंसी कान्हड़ा आदि। 30 रागांगों की चर्चा

NOTES

करते हैं।

1. बिलावल 2. कल्याण
3. खमाज 4. भैरव
5. काफी 6. मारवा
7. पूर्वी 8. तोड़ी

9. ભૈરવી	10. આસાવરી
11. લલિત	12. સારંગ
13. ભીમપલાસી	14. પીલૂ
15. સોરઠ	16. બિભાસ
17. શ્રી	18. નટ
19. કેદાર	20. બાગેશ્રી
21. કાનડા	22. શંકરા
23. હિંડોલ	24. મલ્હાર
25. ભૂપાલી	26. કામોદ
27. આસાવરી	28. બિહાગ
29. દુર્ગા	30. ભટિયાર

— : गीत : —

गीत रचना और प्रकार :-

गीत :- स्वर और लय-ताल बद्ध शब्दों की सुन्दर रचना को गीत कहते हैं।

गीत के शब्द सार्थक और निरर्थक दोनों होते हैं। भजन, गीत, ठुमरी तथा ख्याल के शब्द सार्थक होते हैं, और तराने के शब्द नोम, तोम, तनन, देरे आदि निरर्थक होते हैं। उस्ताद अमीर खाँ का कहना था कि तराना के शब्द अरबी-फारसी भाषा से लिये गये हैं और इनका भी अर्थ होता है।

प्रत्येक गीत को कुछ खंडों या भागों में बाँटा गया है, जिन्हें अवयव कहते हैं। प्राचीन ध्रुपदों के चार अवयव पाये जाते हैं स्थाई, अन्तरा, संचारी और आभोग। आजकल 4 अवयव वाले ध्रुपद बहुत कम गाये जाते हैं। ध्रुपद के अतिरिक्त शेष गीत के प्रकारों जैसे - ख्याल, तराना, ठुमरी आदि के केवल दो अवयव या भाग होते हैं स्थाई और अन्तरा। गीत की स्थाई मन्द्र और मध्य सप्तक के स्वरों में और अन्तरा मध्य और सप्तक के स्वरों में रहता है।

NOTES

गीतों के प्रकार :-

1. ध्रुपद :- अभी तक एकमत से यह निश्चित नहीं हो पाया है कि

ध्रुपद का आविष्कार कब और किसने किया। इस संबंध में विद्वानों के कई मत हैं। कुछ विद्वानों का कहना है कि ध्रुपद की रचना 13वीं शताब्दी में हुई तथा कुछ के मतानुसार 15वीं शताब्दी में ग्वालियर के राजा मानसिंह तोमर ने इसकी रचना की। राजा मानसिंह ने ध्रुपद के प्रचार में बहुत हाथ बँटाया।

तानसेन, स्वामी हरिदास डागुर, नायक बैजू और गोपाल आदि प्रख्यात गायक ध्रुपद ही गाते थे।

ध्रुपद गम्भीर प्रकृति का गीत है। इसे गाने में कण्ठ और फेफड़ों पर बल पड़ता है। इसलिए ध्रुपद को मर्दाना गीत कहते हैं। इसका प्रचलन मध्यकाल में अधिक था। किन्तु आजकल जन रुचि में परिवर्तन होने के कारण इसका स्थान ख्याल ने ले लिया।

SUNDAY 03

प्राचीन ध्रुपद के चार भाग होते थे - स्थाई, अन्तरा, संचारी और आभोग। आधुनिक (वर्तमान) समय में ध्रुपद के केवल दो भाग स्थाई और अन्तरा गाते हैं। इसके शब्द अधिकतर ब्रजभाषा के होते हैं। इसमें वीर और श्रृंगार रस की प्रधानता होती है। ध्रुपद की संगति पखावज से होती थी किन्तु आजकल तबले के साथ ही ध्रुपद गाते हैं।

APRIL
NOTES
The empty vessel makes the loudest sound. – William Shakespeare

इसमें नोम-तोम का आलाप करते हैं, इसमें मींड और गमक का अधिक प्रयोग होता है। प्राचीन काल में ध्रुपद गाने वाले को कलावन्त कहा जाता था। खमाज राग का प्रचलित गीत 'राजत रघुबीर धीर, भंजन भव भीर' ध्रुपद ही है।

धमार :-

यही गीत का एक प्राचीन प्रकार है। इसे धमार ताल में गाया जाता है तथा इसमें अधिकतर राधा-कृष्ण और गोपियों की होली का वर्णन मिलता है। अतः कुछ लोग इसे होरी भी कहते हैं। इसमें नोम-तोम का आलाप तथा लयकारी दिखाते हैं। इसमें दुगुन, तिगुन, चौगुन, आड़ आदि लयकारियाँ अधिकतर गीत के शब्दों के द्वारा दिखाते हैं। और मींड व गमक खूब प्रयोग करते हैं। संगीतज्ञ इसमें सरगम भी बोलते हैं। धमार के प्रत्येक अंग में गम्भीरता रखी जाती है। धमार को होरी या होली भी कहते हैं। धमार के साथ पखावज बजाने की परंपरा है। पखावज न रहने पर तबले से भी काम चला लिया जाता है। राग भैरव में धमार "आज स्यामते होरी खेले लाल। तारी दै दै नाचत गावत संग ब्रज बाल।"

NOTES

ख्याल :-

यह फारसी भाषा का शब्द है। इसका अर्थ है कल्पना। गायक के कल्पना युक्त गीत को शास्त्रकारों ने ऐसे गीत को ख्याल की संज्ञा दी। इसमें स्वरों की सजावट पर अधिक ध्यान रखा जाता है। भातखंडे -
"गीत का वह प्रकार, जिसमें आलाप, तान, स्वरका, कण आदि विभिन्न अलंकारों द्वारा किसी राग में, उसके नियमों का पालन करते हुए भाव अभिव्यक्त करते हैं, ख्याल कहलाता है।
ख्याल में स्वरों की ~~[illegible]~~ सफाई और गले की तैयारी पर विशेष ध्यान (बल) दिया जाता है। ख्याल में ध्रुपद के समान लयकारी पर जोर नहीं दिया जाता है। बल्कि स्वर सौंदर्य पर विशेष ध्यान दिया जाता है। इसमें श्रृंगार रस की प्रधानता होती है। इसके दो प्रकार हैं
1. विलंबित ख्याल ② द्रुत ख्याल
1. विलंबित ख्याल :- यह विलम्बित लय में गाया जाता है इसलिए इसे विलंबित ख्याल कहा जाता है।
NOTES इसे बड़ा ख्याल भी कहते हैं। इसके साथ तबले का प्रयोग किया जाता है। अतः ख्याल के साथ एकताल, तिलवाड़ा, झूमरा, झपताल, आड़ा चारताल आदि ताल बजाये जाते हैं। ख्याल में शब्द कम होते हैं।

ख्याल के केवल दो भाग होते हैं, स्थाई और अन्तरा। ख्याल का मुखड़ा अधिकतर दो से पाँच मात्राओं तक होता है। स्थाई अन्तरा गाने के बाद ख्याल के बीच में राग के स्वरूप की रक्षा करते हुए आलाप या बोल आलाप करते हैं। आलाप में मींड, खटका, मुर्की, कण, आदि का प्रयोग करते हैं। आलाप के बाद ख्याल में बोल-आलाप, बहलावा, लय के साथ बोल-बनाव, तान, सरगम तान इत्यादि गाते हैं।

कहा जाता है कि जौनपुर के सुल्तान हुसैन शर्की ने पन्द्रहवीं शताब्दी में बड़े ख्याल का आविष्कार किया। मोहम्मद शाह रंगीले और उनके दरबारी गायक सदारंग और अदारंग ने अनेक ख्यालों की रचना की। इनके बाद मनरंग ने, इसके बाद दिलरंग, हररंग, दरसपिया आदि नायकों ने केवल ख्याल ही नहीं, बल्कि ख्याल के शब्दों की भी रचना की।

2. द्रुत ख्याल :-

स्वयं नाम से स्पष्ट है कि यह द्रुत गति में गाया जाता है। इसे छोटा ख्याल भी कहते हैं। इसमें भी केवल स्थाई और अंतरा भाग होते हैं। यह तीनताल, एकताल, झपताल, आड़ा चारताल रूपक आदि तालों में गाया जाता है। द्रुत ख्याल की प्रकृति चपल होती है।

NOTES

Those who know how to think need no teachers. – *Mahatma Gandhi*

बड़े और छोटे ख्यालों में केवल लय और प्रकृति का अन्तर होता है। दोनों के गाने का क्रम लगभग समान रहता है। इसमें भी आलाप तानें, सरगम, बहलावा, मींड, कण, खटका मुर्की आदि का प्रयोग करते हैं।

कहा जाता है कि अमीर खुसरो ने कुत्र ख्याल का आविष्कार कौवालों के आधार पर चौदहवीं शताब्दी में किया था। मध्यकाल में जो स्थान ध्रुपद को प्राप्त था वही स्थान आधुनिककाल में ख्याल को प्राप्त है।

बागेश्वरी राग का प्रसिद्ध गीत 'जमुना तट बंशी बजाई' तथा भीमपलासी का गीत 'जा जा रे अपने मंदिरवा' छोटा ख्याल कहलाता है।

ठुमरी :-
यह गीत का वह प्रकार है जिसमें राग की शुद्धता की तुलना में भाव सौन्दर्य पर अधिक महत्व दिया जाता है। इसकी प्रकृति ख्याल की तुलना में चपल होती है।

ठुमरी खमाज, देश, तिलक, कामोद, तिलंग, पीलू, काफी, भैरवी, सिन्दूरा, जोगिया आदि रागों में गाई जाती है। इसके साथ दीपचन्दी अथवा जत ताल बजाया जाता है। ठुमरी में शब्द कम होते हैं। इसमें श्रृंगार रस प्रधान होता है और मींड-कण का खूब प्रयोग होता है। स्थाई-अन्तरा में काम करने के बाद जब पुनः गीत की स्थाई में आते हैं तो कहरवा ताल में आ जाते हैं। गायक और तबलिया दोनों विभिन्न प्रकार के सुन्दर बोल बनाते हैं और कुछ देर के बाद पुनः मूल ठेके में आ जाते हैं।

ठुमरी उन व्यक्ति के लिए उपयुक्त है जिनका कण्ठ मधुर और चपल होता है। बनारस, लखनऊ और पंजाब की ठुमरियाँ विशेष से प्रसिद्ध हैं।

विद्वानों का ऐसा ~~अनु~~ अनुमान है कि लगभग एक शताब्दी पूर्व इसके आविष्कार लखनऊ के अंतिम

NOTES

नवाब वाजिद ~~अलि~~ अली शाह ने
अख्तरपिया ने किया था। भैरवी
राग में श्रृंगार रस की ठुमरी —

सांवरिया ने जादू मारा, ~~बाजूबन्द~~
बाजूबन्द खुल-खुल जाय।
जादू की पुड़िया भर-भर मारा,
का करें वैद्य विचार ॥

-: टप्पा :-

टप्पा :- यह गीत का वह प्रकार है जिसके शब्द अधिकतर पंजाबी भाषा के होते हैं। इसकी प्रकृति बहुत चपल होती है। यह काफी, भैरवी, पीलू, देश, खमाज, झिंझोटी आदि रागों में गाया जाता है। इसमें श्रृंगार रस प्रधान है। टप्पा के भी दो भाग होते हैं, स्थाई तथा अंतरा। इसकी ~~शैली~~ गायन-शैली गीत के अन्य प्रकारों से बिलकुल भिन्न होती है। इनमें छोटी और पेंचदार तानों का अत्यधिक प्रयोग होता है। अतः इसे गाने के लिए गला काफी तैयार होना चाहिए। इसमें स्वर का, मुर्की, कण का आधिक होता है

SUNDAY 10
APRIL
NOTES

इसके साथ एक विशेष प्रकार का ताल का प्रयोग होता है जिसे टप्पा ताल कहते हैं। टप्पे का प्रचार प्रसार पंजाब, उत्तर प्रदेश तथा बंगाल में अधिक है। कहा जाता है कि मुहम्मदशाह के समय में गुलाम नबी शोरी ने गीत के इस प्रकार का आविष्कार किया था।

— : लक्षण गीत : —

लक्षण गीत : —

जिस गीत में अपने राग का पूरा लक्षण हो, लक्षण गीत कहलाता है। इसका उद्देश्य यह है कि प्रारंभिक विद्यार्थियों को गीत के सहारे राग का पूरा परिचय कण्ठस्थ हो जाय। इस में भी दो भाग होते हैं - स्थाई और अंतरा। इसकी गायन शैली ख्याल की तरह होती है। ये अधिकतर उन्हीं तालों में होते हैं जिनमें छोटा ख्याल होता है। कुछ लक्षण गीत ध्रुपद अंग के भी पाए जाते हैं। लक्षण गीत केवल प्रारंभिक विद्यार्थियों के लिए होता है। अतः महफिल या संगीत सभा में लक्षण गीत सुनने को नहीं मिलता है। संगीत राग दर्शन पुस्तक से खमाज राग में निबद्ध एक लक्षण गीत है।

सोहत मधुर खमाज, सुध सुर युत दोउ निखाद।
समय तृतीय प्रहर रात, षाडव सम्पूर्ण जाति।।
आरोहन ऋषभ छूटत, सब सुर अवरोह करत।

Those that know, do. Those that understand, teach. – Aristotle

-: तराना :-

तराना :-

गीत के इस प्रकार में नोम, तोम, तनन, ना, दिर, दिर, दानी, तादानी, अली, ~~अलिल~~ यलिलि आदि वर्ण होते हैं। तराना सभी रागों में तथा ख्याल के सभी तालों में गाया जाता है। मध्य लय के तराने की गति धीरे-धीरे बढ़ाई जाती है और अधिकतम गति में पहुँचकर उसे ~~स~~ समाप्त करते हैं। तराने का मुख्य उद्देश्य तैयारी, लयकारी, और उच्चारण अभ्यास है। द्रुत लय का तराना गाने से वाणी में सफाई आती है तराना छोटा ख्याल के बाद गाते हैं कुछ तराने विलम्बित लय में भी पाए जाते हैं लेकिन बहुत कम। कुछ तराने में कहीं-कहीं तबला और पखावज के बोल भी रहते हैं। तराना की गायन शैली ख्याल के समान होती है तराना के शब्दों का भी अर्थ होता है उदाहरण - मालकौंस राग का तराना निम्न है:-

तोम तनन तन देरेना, तनधारे तारे दिर,
तदानि नादे नादे तदरे दानि।
धारे धो धलियाला यला लाले तन

 देरेना तन देरेना, तदानि धा किटतक
धुम किट धेता कड़ान धा।

:- चतुरंग :-

चतुरंग -
स्वयं नाम से यह स्पष्ट है कि इसमें चार वस्तुओं का मिश्रण है। ख्याल के शब्द अर्थात साहित्य, तराना, पखावज अथवा तबला के बोल तथा सरगम इसमें मिले रहते हैं। यह ख्याल के समान ही गाया जाता है।

त्रिवट :-
इसमें तीन चीजों का मिश्रण है, इसलिये इसे त्रिवट कहा गया है। इसमें कविता, तराना, तथा पखावज या तबला के बोल होते हैं।

स्वर-मालिका :-
राग में प्रयोग किये जाने वाले स्वरों की ताल बद्ध रचना स्वर-मालिका कहलाती है। यह प्रत्येक राग में हो सकती है। और प्रत्येक ताल में होती है सकती है। इसका मुख्य उद्देश्य प्रारंभिक विद्यार्थियों को स्वर और राग ज्ञान कराना है। इसको सरगम या सुरावर्त भी कहते हैं। खमाज राग के स्थाई :-

NOTES

सां नि ध सां | नि ध म ग | म प ध म | ग रे सा
3 x 2

सा सा ग म | प - ग म | नि ध सां नि | ध प म ग
0 3 x 2

होली :-
यह गीत का वह प्रकार है जो ठुमरी के ही ढँग पर दीपचंदी ताल में तथा मुख्यतः काफी राग में गाई जाती है। इसमें कृष्ण से संबंधित ब्रज की होली का वर्णन मिलता है। इसमें मींड, खटका, कण, मुर्की आदि का सुर लगाते हैं।

भजन और गीत :-
जिन गीतों में ईश्वर - वन्दना या भगवान का गुण-गान होता है वे भजन कहलाते हैं और जो - साहित्यिक कवितायें स्वर व लय में बँध ~~जाती~~ दी जाती है, गीत कहलाती हैं। इन दोनों की विशेषता यह है कि इनमें राग का बंधन नहीं होता है। दोनों में शब्द के भाव पर विशेष ध्यान दिया जाता है। अगर कोई भजन या गीत राग में है तो अच्छा है और नहीं है तो कोई हानि नहीं। अगर किसी भजन में, जो किसी राग में है, और किसी स्थान पर राग - नियम का
खंडन भी होता है तो भी कोई बात नहीं। ख्याल के समान इनमें अगर आलाप - तान की आवश्यकता होती है तो उसका थोड़ा अंश दिखा दिया जाता है। ये अधिकतर दादरा, कहरवा

Only I can change my life. No one can do it for me. – Carol Burnett

तीन ताल और कभी-कभी रूपक और झपताल में भी होते हैं। इनमें मींड कण, खटका, आदि का महत्व रहता है। भजन साधारणतया पीलू, भैरवी, खमाज, काफी, देश आदि मधुर रागों में गाया जाता है।

गीत की रचना कविता के भावानुकूल स्वर बद्ध की ~~जाति~~ जाती है। भजन और गीतों का राग में होना आवश्यक नहीं है।

सारणा चतुष्टयी :-

सारणा चतुष्टयी :-

भरत ने अपनी पुस्तक नाट्य शास्त्र में श्रुति पर किये गये एक प्रयोग का वर्णन किया है। इस प्रयोग का नाम है सारणा चतुष्टयी। यह चार भागों में विभक्त है। प्रत्येक भाग को सारणा और सम्पूर्ण प्रयोग को सारणा चतुष्टयी कहा गया है। ~~भरत ने श्रोता~~

भरत ने गणित का आधार न लेकर संवाद भाव अर्थात षडज-मध्यम और षडज-पंचम भाव का आधार लिया है इसमें ग्राम शब्द का प्रयोग किया। इस ग्राम की मुख्य विशेषता यह थी कि सम्पूर्ण ग्राम सम्वाद-भाव से परिपूर्ण था। उसने ध्यान रखा कि प्रयोग में किसी भी समय सम्वाद भाव बिगड़ने न पाये।

सारणा विधि :-

प्रयोग में सर्वप्रथम भरत ने समान आकार, समान लंबाई-चौड़ाई तथा एक ही लकड़ी की बनी दो वीणा ली। प्रत्येक में एक किस्म के पर्दे समान दूरी पर लगाये। उसके बाद प्रत्येक में सात तार बाँधने के बाद दोनो वीणा

NOTES

को एक समान षडज ग्रामिक स्वरों से मिलाया। जिससे दोनों से एक ही नाद उत्पन्न हो। षडज ग्राम के ~~अनुसार~~ अनुसार सा, चौथी श्रुति पर; रे सातवीं, ग नौवीं, म तेरहवीं, प सतरहवीं ध बीसवीं;

और नि 22वीं श्रुति पर स्थापित हुआ। कारण यह है कि "चतुश्चतुश्चैव" के अनुसार सा, प को 4-4, रे, ध को 3-3 और ग-नि को 2-2 श्रुतियाँ होती है।
भरत ने प्रत्येक स्वर को अंतिम श्रुति पर स्थापित किया। इसलिए षड्ज चौथी श्रुति पर आया। उसीप्रकार अन्य स्वर भी आया।

दोनों वीणा में षड्ज ग्रामिक स्वरों की स्थापना करने के बाद एक वीणा को प्रमाण के लिए अलग रखा, जिसे उसने अचल वीणा कहा। दूसरी वीणा को चल वीणा कहा।

प्रथम सारणा :-

दोनों वीणा के पंचम (प) सतरहवीं श्रुति पर था। सर्वप्रथम उसने चल वीणा के पंचम को एक श्रुति इतना उतारा कि रिषभ के साथ षड्ज-मध्यम भाव स्थापित हो जाय। षड्ज-मध्यम भाव के बीच 9 श्रुतियों की दूरी होती है। रिषभ सातवीं श्रुति पर है, अतः सोलहवीं श्रुति पर स्थापित पंचम में सा-म भाव स्थापित होगा। इस तरह उसने सम्वाद के आधार पर स्वरों का सही स्थान पता लगाया।

द्वितीय सारणा :-

इस सारणा में भरत ने

Beauty begins the moment you decide to be yourself. — Coco Chanel

सर्वप्रथम पंचम को एक श्रुति नीचा किया और तत्पश्चात् उसी पंचम को पुन: षडज का पंचम मानकर अन्य श्रुतियों को एक-एक श्रुति नीचा कर दिया। प्रथम सारणा में पंचम सोलहवीं पर था और अब द्वितीय सारणा में 15 वीं श्रुति पर आ गया। पंचम को 15 वीं श्रुति पर करने से मध्यम ग्राम की रचना हुई। क्योंकि मध्यम ग्राम में पंचम स्वर मध्यम से 3 श्रुति ऊँचा और धैवत स्वर पंचम से 4 श्रुति ऊँचा होता है। इसके बाद अन्य स्वरों को 1-1 श्रुति कम करके से षडज ग्राम की रचना हुई। इसमें वीणा का गन्धार और निषाद अचल वीणा के रिषभ और धैवत से मिल गया है। क्योंकि अब अचल वीणा के सातों स्वर क्रमश: 2, 5, 7, 11, 15, 18, और 20 वीं श्रुति पर आ गये हैं।

तृतीय सारणा :- इसकी रचना करते समय भरत ने प्रथम दो सारणाओं की तरह सर्वप्रथम पंचम को एक श्रुति नीचा कर मध्यम ग्राम की रचना की और इस नवीन पंचम को षडज ग्राम का

NOTES पंचम मानकर अन्य स्वरों को षडज-पंचम भाव के अनुसार एक-एक श्रुति नीचे कर दिया। और अंत में 3 श्रुति नीचे वीणा पुन: षडज ग्राम में आ गया और सातों स्वर क्रमश: 1, 4, 6, 10, 14, 17 और 19 वीं श्रुति पर आ गये। दोनों वीणाओं

I wish to live a life that causes my soul to dance inside my body. – Dele Olanubi

को पारस्परिक मिलाने से चल वीणा का रे और ध, अचल वीणा के क्रमशः सा और प से तादात्म हो गये।

चौथी सारणा :-

प्रयोग के इस चरण भरत ने अन्य सारणाओं के समान सर्वप्रथम पंचम को एक श्रुति कम पर स्थित किया और उसके बाद अन्य स्वरों को एक-एक श्रुति नीचा किया। इस सारणा में पंचम 13वीं श्रुति पर था। इस प्रकार केवल पंचम ही नहीं वरन् सभी स्वर अचल वीणा की तुलना में 4-4 श्रुति नीचे आ गये। चौथी सारणा की क्रिया के पश्चात भरत ने अचल और चल वीणा के स्वरों को मिलाया उसने देखा की चल वीणा का प, म और सा क्रमशः अचल वीणा के म, ग और मंद्र नि से मिल गये हैं।

इस सम्पूर्ण क्रिया को भरत ने सारणा चतुष्टयी की संज्ञा दी।

मूर्च्छना :-

मूर्च्छना :-

भरत के अनुसार क्रम से सप्त स्वरों का आरोह - अवरोह करने से मूर्च्छना की रचना होती है, लेकिन प्रश्न यह उठता है कि किन सात स्वरों का आरोह - अवरोह किया जाय। ग्राम के ही स्वरों का आरोह-अवरोह करने से मूर्च्छनायें बनती है। ग्राम चाहे षडज ग्राम हो या मध्यम ग्राम दोनों से समान रूप से मूर्च्छनाओं की रचना होती है।

'संगीत रत्नाकर' में कहा गया है "ग्राम स्वर-समूह स्यात मूर्च्छनादे: समाश्रय:" अर्थात ग्राम की ही स्वरों पर मूर्च्छना आधारित है। ग्राम के किसी भी स्वर को स्वरित (आधार) मान कर उसके ही स्वरों पर आरोह- अवरोह करने से मूर्च्छना की रचना होती है। उदाहरण - षडज ग्राम के रिषभ को आधार मान कर मूर्च्छन प्रारम्भ करने से गान्धार, रिषभ हो जाता है, मध्यम गान्धार होगा आदि एक ग्राम में 7 स्वर होते है अत: प्रत्येक ग्राम में 7 मूर्च्छनाओं की रचना संभव है। अत: षडज, गान्धार और मध्यम ग्रामों से कुल 7x3=21 मूर्च्छनाएँ बनती है।

मूर्च्छना और आधुनिक थाटों की तुलना :- सर्वप्रथम षडज ग्राम को

NOTES

तुलना आधुनिक थाट से करेंगे। इस ग्राम के सातो स्वर क्रमशः 4, 3, 2, 4 3, 2 श्रुतियों की दूरी पर स्थित हैं।

1. पहली मूर्छना षड्ज से प्रारंभ होगी अतः 4थी पर सां, 7वीं पर रे, 9वीं पर गा, 13वीं पर म, 17वीं पर प, 20वीं पर धा और 22वीं पर नि आयेगा इसमें रे और ध कोमल होगा। मूर्छना काफी थाट के समान होगी।

~~दो स्वर~~ दो श्रुतियों से अर्द्ध स्वर (Semi Tone) और 3 या 4 श्रुतियों से पूर्ण स्वर (Whole Tone) होता है।

2. द्वितीय मूर्छना में नि को सा मान कर षड्ज ग्राम के स्वरों पर क्रमिक आरोह-अवरोह करेंगे। इसलिए सातों स्वर क्रमशः 2, 4, 3, 2, 4, 4 और 3 श्रुतियों के अन्तर पर होंगे। यह आधुनिक बिलावल थाट होगी। क्योंकि इसका कोई भी स्वर कोमल नहीं है नियमानुसार मध्यम को कोमल 'म' होना चाहिए, किंतु मध्यम कोमल नहीं होता। वास्तव में कोमल 'म' को ही शुद्ध 'म' कहते हैं।

NOTES

3. तीसरा मूर्छना में मन्द्र धैवत को सा मान कर आरोह-अवरोह करेंगे। अतः सातो स्वर क्रमशः 3, 2, 4, 3, 2

4 और 4 श्रुतियों के अन्तर पर होंगे। इसमें रे कोमल और पंचम स्वर तीव्र मध्यम हो जावेगा क्योंकि रे और प अपने - अपने निकटवर्ती स्वरों से क्रमशः दो श्रुति ऊँचे हैं। इस मूर्छना में रे, ग, ध और नि स्वर कोमल तथा दोनों मध्यम और पंचम वर्ज्य होने से यह मूर्छना उत्तर भारतीय किसी भी थाट के समान नहीं होगी।

4. चौथी मूर्छना मन्द्र के पंचम से प्रारंभ होगी। अतः इसके सातों स्वर 4, 3, 2, 4, 3, 2 और 4 श्रुतियों पर होंगे। इसके गांधार, धैवत, निषाद स्वर कोमल हो जावेगा। इसलिए यह मूर्छना आसावरी थाट के समान होगी।

5. पाँचवी मूर्छना मन्द्र के मध्यम से प्रारंभ होने से सातों स्वर क्रमशः 4, 4, 3, 2, 4, 3 और 2 श्रुत्यांतर पर होंगे। इसमे केवल निषाद स्वर कोमल होगा। यह मूर्छना खमाज थाट के समान होगी।

SUNDAY 24

APRIL

6. छठी मूर्छना मन्द्र ग से प्रारम्भ होगी। इसके स्वर 2, 4, 4, 3, 2, 4, 3 श्रुत्यांतर होंगे जो कल्याण थाट के समान होगा।

7. सातवी मूर्छना मन्द्र के रिषभ से प्रारंभ होगी, और स्वर क्रमशः 3, 2, 4, 4, 3, 2, 4 श्रुतियांतर होंगे। रे, ग, ध, नी स्वर कोमल होंगे। यह मूर्छना भैरवी थाट के समान होगी।

NOTES

The measure of intelligence is the ability to change. – Albert Einstein

तिरोभाव - आविर्भाव

तिरोभाव - आविर्भाव -

संगीत का मुख्य उद्देश्य रंजकता है। अतः एक ओर जहाँ राग के नियमों का पालन आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य माना गया है, वहाँ दूसरी ओर अगर मधुरता में वृद्धि होती है, तो राग के नियमों में शिथिलता भी स्वीकार की गई है। कभी-कभी मूल राग को थोड़ा छिपा देने से या समप्रकृति राग की छाया लाने से राग की कर्णप्रियता बढ़ जाती है। जिसे संगीत में तिरोभाव कहते हैं।

तिरोभाव के बाद जब पुनः मूल रागों में आ जाते हैं तो उसे आविर्भाव कहते हैं।

पहले तिरोभाव दिखाया जाता है और बाद में आविर्भाव अतः तिरोभाव - आविर्भाव कहा जाना चाहिए न कि आविर्भाव - तिरोभाव।

तिरोभाव क्रिया -

1. जब मूल ~~राग~~ राग का स्वरूप ठीक प्रकार से स्थापित हो जाय नहीं तो सुनने वालों को कभी कुछ राग और कभी दूसरा राग मालूम पड़ेगा।

2. तिरोभाव - आविर्भाव का मुख्य उद्देश्य राग की मधुरता में वृद्धि है। केवल इसलिए तिरोभाव न करना चाहिए कि वह इससे करने में सामर्थ्य है अतः तिरोभाव उसी समय

करना चाहिए ताकि राग की मधुरता बढ़े।
3. तिरोभाव कम-से-कम समय के लिए दिखाया जाना चाहिए। अधिक समय तक करने से मूल राग की क्षति पहुँचेगी।

हमीर राग का उदाहरण :-

(अ) सा, रे सा ग म ध नि ध सां, नि ध प - मूल राग (हमीर)
(ब) मं प ध प म, प म ऽ रे सा - तिरोभाव (केदार)
(स) ग म ध नि ध सां, नि ध प - आविर्भाव (हमीर)

आधुनिक आलाप विधि

आधुनिक काल ख्याल का युग है। जिस प्रकार मध्य काल में ध्रुपद का प्रचलन था, इसी प्रकार आधुनिक काल में ख्याल का प्रचलन है। आजकल ध्रुपद धमार, ठुमरी, तराना, टप्पा, भी गाये जाते हैं। किन्तु ख्याल की तुलना में ये कम गाये जाते हैं। अधिकतर लोग ख्याल गाते हैं। ध्रुपद गायन में गीत के पूर्व नोम-तोम का विस्तृत आलाप चार खण्डों में किया जाता है। इसका मुख्य कारण यह है कि ध्रुपद में लयकारी दिखाई जाती है और इसके बीच में आलाप की कोई गुंजाइश नहीं रहती, इसलिये गीत के प्रारम्भ में ही एक विस्तृत आलाप किया जाता है। ख्याल गायन के बीच में आलाप की बहुत गुंजाइश रहती है, इसलिए अधिकांश गायक ख्याल के प्रारंभ में बहुत थोड़ा आलाप करते हैं। उनका कहना है कि ख्याल के पूर्व विस्तृत आलाप का तात्पर्य यह होगा कि ख्याल के बीच में आलाप लेने से स्वर-समूहों की पुनरावृत्ति होगी, चाहे आकार में आलाप हो या गीत के

NOTES शब्दों को लेकर। केवल राग-सूचक स्वर समूहों का प्रयोग प्रारंभिक आलाप के रूप में किया जाना चाहिए।

ख्याल के पूर्व जो संगीतज्ञ आलाप करते हैं, उनकी मुख्य दो विधियाँ

It does not matter how slowly you go as long as

है- आकार में और नोम-तोम में। नोम-तोम का आलाप लगभग ध्रुपद के समान किया जाता है। नोम-तोम के आलाप को चार भागों मे विभाजित करते हैं-
① स्थाई ② अन्तरा ③ संचारी ④ आभोग आलाप के प्रथम भाग में सप्तक के पूर्वांग और मंद्र सप्तक में तथा द्वितीय भाग में सप्तक के उत्तरांग और तार सप्तक में आलाप करते हैं। प्रथम भाग का आलाप षडज अथवा उसके पास के स्वरों से और दुसरे भाग का प्रत्येक आलाप पंचम या उसके पास के स्वरों से प्रारम्भ होता है। इन दोनों भागों में मींड और स्वरों की गम्भीरता पर विशेष ध्यान दिया जाता है। आलाप के तीसरे भाग का प्रारम्भ कुछ लय बढ़ाकर होता है और विभिन्न प्रकार के गमकों का विशेष प्रयोग किया जाता है। आलाप के चौथे भाग मे आलाप कि गति धीरे-धीरे बढ़ाई जाती है और गायक तीन सप्तकों में घुमता है। प्रत्येक आलाप के बीच में सम दिखाते हैं और कहीं-कहीं 'त ही अनत हरि' आदि शब्द को जोड़ देते हैं। इस प्रकार नोम-तोम का आलाप

NOTES समाप्त होता है। यह ध्यान रहे कि आलाप की कोई निश्चित विधि नहीं है जिसका पालन प्रत्येक गायक के लिए अनिवार्य है। संगीत व्यक्ति प्रधान है, अतः गायक अपनी इच्छानुसार परम्परागत विधि से थोड़ा परिवर्तन कर लेता है।

APRIL

Knowledge rests not upon truth alone, but upon error also. – Carl Jung

नाद :- नियमित और स्थिर आन्दोलन-संख्या वाली मधुर ध्वनि को नाद कहते हैं या संगीतोपयोगी मधुर ध्वनि को नाद कहते हैं। नाद की उत्पत्ति आंदोलन या कंपन से होती है।

आंदोलन सं. सा - 240, रे - 270, ग - 300, म - 320, प - 360, ध - 405, नि - 450

सहायक नाद :- वह नाद जो हमें मूलनाद की सहायता से अपने आप सुनाई देते हैं। Scientifically सहायक नाद कैसे मिलते हैं? एक अच्छे सुर किये तानपुरे से सहायक नाद मिलते हैं।

तानपुरे की प स स स़ इन्हीं से
म स स स़
नि स स स़

जो सहायक नाद होते हैं वह मूलनाद दोगुनी, ~~ऊंचाई तक सुनाई देते हैं। तो हम सहायक नाद प्राप्त~~ तीगुनी से 9 गुनी ऊंचाई तक सुन सकते हैं तो हमें सहायक नाद ~~प्राप्त~~ प्राप्त करने के लिए 9 तक गुणा करेंगे, जैसे मन्द्र स्वरों से सहायक नाद प्राप्त करेंगे।

मन्द्र सा से
मध्य सा = 240

NOTES

मंद्र सा = 240 ÷ 2 = 120

आंदोलन सं.	
सा = 240	120×1 = 120 मंद्र सा
रे - 270	120×2 = 240 मध्य सा
ग - 300	120×3 = 360 मध्य प
म - 320	120×4 = 480 तार सां
प - 360	120×5 = 600 तार गं
ध - 405	120×6 = 720 तार पं
नि - 450	120×7 = 840 ×
	120×8 = 960 - अति तार सं
	120×9 = 1080 - अति तार रें

A man paints with his brains and not with his hands. – Michelangelo

रे, म, प स्वर (सहायक नाद प्राप्त हुए)

मन्द्र प से

मध्य प = 360

मंद्र प = 360 ÷ 2 = 180

180×1 = 180 - मंद्र प

180×2 = 360 - मध्य प

180×3 = 540 - तार रें

180×4 = 720 - तार प

180×5 = 900 - [redacted] तार नि

180×6 = 1080 अति तार रें

180×7 = 1260 ~~अति तार~~ ×

180×8 = 1440 अति तार पं

180×9 = 1620 अति तार धं

रे नि ध (सहायक नाद प्रथम)

मन्द्र 'म' से

मध्य म = 320   मन्द्र म = 320 ÷ 2 = 160

160×1 = 160 मंद्र म

160×2 = 320 मध्य म

160×3 = 480 सां

160×4 = 640 मं

160×5 = 800 धं

160×6 = 960 अति सां

160×7 = 1120 ×

NOTES 160×8 = 1280 अति मं

160×9 = 1440 अति धं

सा, ध (सहायक नाद)

संगीत की उत्पत्ति :-

संगीत रत्नाकर में शारंगदेव ने लिखा है "गीतं वाद्यं तथा नृत्यं त्रयं संगीत मुच्यते" अर्थात् गायन, वादन और नृत्य ये तीनों मिलकर संगीत कहलाते हैं। वास्तव में ये तीनों कलाएँ स्वतंत्र हैं फिर भी गायन के अधीन वादन है और वादन के अधीन नर्तन है। प्राचीन काल में इन तीनों कलाओं का प्रयोग अधिकांशतः साथ-साथ हुआ करता था।

संगीत शब्द गीत में 'सम' उपसर्ग लगाकर बना है।

संगीत = सम (सहित) + गीत (गान)

गीत यानि गान, सम यानि सहित। यानि गान के ~~साथित~~ सहित अंगभूत क्रियाओं जैसे नृत्य और वादन के साथ किया हुआ कार्य संगीत कहलाता है। प्राचीन काल में पहले गायन, उसके बाद वादन और अंत में नृत्य ऐसा क्रम माना जाता था।

संगीत की उत्पत्ति कब हुई होगी इसे निश्चित तौर पर समझ पाना बहुत कठिन है क्योंकि संगीत कोई भौतिक कला नहीं, न ही इसका ~~[illegible]~~ संबंध विद्वता से है, अपितु संगीत एक ऐसी ललित कला है जो मानव के विभिन्न भावों की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है। संगीत मन से उत्पन्न होता है और सुनने वाले के

के मन को ही प्रभावित करता है। अतः सर्वप्रथम तो यह कहना गलत नहीं होगा कि जब से मानव ने सोचना, समझना और विभिन्न भावों को अनुभव करना प्रारंभ किया होगा। तभी से संगीत उसके साथ जुड़ गया, डॉ. लालमणि मिश्रा के अनुसार 'संगीत का प्रारंभ कैसे हुआ जिस प्रकार यह कोई नहीं बता सकता कि मानव का जन्म की प्रक्रिया कब से प्रारंभ हुई होगी, इसी प्रकार संगीत के उद्गम के बारे में सही-सही नहीं बताया जा सकता।

संगीत की उत्पत्ति के विषय में पश्चिम के विद्वान भी एक मत नहीं है। बल्कि इस संबंध में धार्मिक, पौराणिक और मनोवैज्ञानिक मत तथा किंवदंतियां प्रचलित है। धार्मिक दृष्टिकोण के अनुसार संगीत की उत्पत्ति ब्रह्मा से हुई। ब्रह्मा ने यह कला शिव को दी, शिव से सरस्वती को प्राप्त हुई इसलिए ~~[illegible]~~ सरस्वती को वीणा पुस्तक धारिणी कहकर संगीत और साहित्य की अधिष्ठात्री माना गया है सरस्वती से

NOTES

यह ज्ञान नारद को प्राप्त हुआ तथा नारद से स्वर्ग के गान्धर्व किन्नर तथा अप्सराओं को संगीत की शिक्षा प्राप्त हुई। ब्रह्मा से ही भरत, नारद, तथा हनुमान आदि ऋषि संगीत कला में पारंगत होकर भूलोक

पर संगीत कला के प्रचारार्थ अवतरित हुए
'भरत' के ग्रंथ 'नाट्यशास्त्र' में यह माना गया है कि संगीत स्वयं ब्रह्मा की रचना है। दामोदर पंडित ने अपने ग्रंथ 'संगीत दर्पण' में भी संगीत की उत्पत्ति ब्रह्मा से ही मानी है। 'संगीत मकरंद' के रचयिता नारद ने भी संगीत की उत्पत्ति ब्रह्मा से ही मानी है परन्तु 'संगीत रत्नाकर'' के रचयिता शारंगदेव ने संगीत की उत्पति सदाशिव से ~~मानि~~ मानी है तथा कुछ विद्वानों ने ॐ शब्द से मानी है। फारसी दंत कथाओं के अनुसार हजरत मूसा जब पहाड़ों में घूम - घूम कर वहाँ की ~~छटा~~ छटा देख रहे थे, उसी वक्त आकाशवाणी हुई 'तू अपना डंडा इस पत्थर पर मार''। पत्थर पर डंडा ~~मारते~~ मारते ही उसके सात टुकड़े हो गये। हर टुकड़े अलग - अलग धार वह उठी और उस जल धार से अलग - अलग आवाज ने 7 स्वरों की रचना की। जिसे सा रे ग म प ध नि कहते है।
यूरोप के इतिहासकार Woolivam ने origin of music में उनको बेला को संगीत की उत्पत्ति का स्रोत माना है। इसमें कितना ऐतिहासिकता है यह कहना कठिन है।
कुछ विद्वानों ने संगीत की उत्पत्ति पक्षियों से मानी है। अरब के सुप्रसिद्ध इतिहासकार 'ओलासी निजामी'

NOTES

...Heaven. – C.S. Lewis

ने लिखा है कि मानव ने सर्वप्रथम संगीत को बुलबुल से प्राप्त किया क्योंकि बुलबुल के स्वरों में जितनी मिठास और सुरीलापन है उतना अन्य पक्षियों में नहीं।

भारतीय संगीतज्ञ मतंग के अनुसार समस्त विश्व नादात्मक है। मतंग की बृहद्देशी में सात स्वरों की उत्पत्ति निम्न प्रकार से बतायी है - मोर से षडज, चातक से ऋषभ, बकरे से गंधार, क्रौंच पक्षी से मध्यम, कोयल से पंचम मेंढक से धैवत और हाथी से निषाद की उत्पत्ति मानी है।

प्लेटो के मत के अनुसार संगीत समस्त ~~[illegible]~~ विज्ञानों का मूलाधार है। तथा ईश्वर के द्वारा इसका निर्माण विश्व की वर्तमान विसंवादी प्रवृत्तियों के निराकरण के लिए हुआ है

विश्वकला विशेषज्ञ गवासा तथा अन्य कई विद्वानों के अनुसार संगीत की उत्पत्ति में प्रकृति योग है। मनुष्य को संगीत का मनोरम उपहार प्रकृति से उपलब्ध हुआ है जैसे सरिताओं के ऊँची-नीची लहरों से, सागर की तरंगों से, पक्षियों की मधुर चहचहाट से, समीर की मधुर झोंकों से, प्रत्येक दिशा से, उसे संगीत का मधुर स्वर सुनाई दिया। मनुष्य ने इसका अनुसरण किया और इससे उसके जीवन में सरसता आई और उस सरसता

को देखने के लिए मनुष्य ने स्वरों पर विचार करना आरंभ कर दिया। इन्हीं परिणामों के फलस्वरूप ही संगीत की उत्पत्ति हुई।

स्वामी प्रज्ञानन्द के अनुसार आरम्भ में संगीत मनुष्य के अंतः करण में निहित था। विभिन्न कार्यों में मनुष्य अपने से अधिक शक्तिशाली प्रकृति को समझता था। विभिन्न पशु पक्षियों की ध्वनियों को वह मंगल या अमंगल का प्रतीक मानते थे। अनुकरण प्रिय मनुष्य उन ध्वनियों की सहायता से अर्थहीन भाषा के संगीत से विश्व देवता की वंदना करता था। संभव है कि वह संगीत एक या दो स्वर का होता था। सात स्वरों का विकास कालक्रम में हुआ। इसी श्रृंखला अनुसार संगीत की उत्पत्ति हुई।

षड्ज-पंचम और षड्ज-मध्यम

षड्ज-पंचम और षड्ज-मध्यम :-

षड्ज-पंचम और षड्ज-मध्यम स्वरों के के जानने से पहले संवाद के बारे में जाना आवश्यक है। संवाद (बातचीत) का अर्थ है बोलना और समझना। संगीतमय वार्तालाप में माधुर्य या मधुरता एक महत्वपूर्ण तत्व है। षड्ज-पंचम या षड्ज-मध्यम स्वरों के संयोजन को बजाकर संवाद बनाया जाता है। उनका एक दूसरे के साथ पूर्ण रूप से मिश्रित होना या विलीन हो जाना, जिससे उनके व्यक्तिगत अस्तित्व की पहचान करना मुश्किल हो जाता है, स्वर संवाद कहलाता है। हिन्दुस्तानी संगीत में, षड्ज-पंचम भाव संवाद का सबसे प्राथमिक और शक्तिशाली तत्व है।

यह कहा जा सकता है कि षड्ज-पंचम भाव में राग में स्वर संवाद बनाने की शक्ति होती है। दो स्वरो के मेल से बनने वाली धुन ही हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत में राग की आधार का अवधारणा का आधार है। षड्ज-पंचम भाव की अवधारणा के

NOTES

निर्माता विश्वविख्यात संगीतज्ञ श्रीनिवास पंडित है। षड्ज और पंचम एक दूसरे के पूरक और पूर्ण है। सा-प स्वरसंवाद की तुलना में सा-म स्वरसंवाद थोड़ा कम

मधुर / सुस्वाद लगता है।
दोनों स्वरों को एक साथ बजाने के मधुर संयोजन को सहसंवाद कहते है। इस प्रक्रिया का उपयोग केवल वाद्य संगीत में ही किया जाता है। दो या दो से अधिक स्वरों का सहसंवाद वाचिक रूप में प्रस्तुत नहीं किया जा सकता। भारतीय संगीत में सहसंवाद की अपेक्षा स्वरसंवाद अधिक अपेक्षित है।
षड्ज की परिभाषा है "अन्य छह स्वरों का निर्माता"। प्रधान या पहला स्वर हमेशा षड्ज होता है। सप्तक में से किसी भी स्वर को षडज मानकर सप्तक की रचना की जा सकती है और अन्य स्वर अपने निश्चित अंतराल पर उसका अनुसरण करेंगे। इसे मूर्च्छना कहते हैं। षडज की एक और विशेषता है - ग्रामीण स्वर की विशेषताएँ केवल उसी पर लागू होती है। अन्य किसी पर स्वर पर नहीं। ग्रामीणी स्वर चतुःश्रुतिक होता है। किसी भी सप्तक में दो स्वर संवादी होता है। इसलिए इसे षड्ज - मध्यम भाव कहते हैं। ऐसे मधुर ~~स्वरसंवाद~~
NOTES स्वरसंवादों के स्वर संयोजन नीचे दिए गए हैं: -
1. षडज - पंचम भाव (सा-प)
2. षडज - मध्यम भाव (सा-म)
3. षडज - तार षड्ज (सा-सां)

I am prepared for the worst, but hope for the best. – *Benjamin Disraeli*

श्रुतियों में ये संवाद 9 और 13 के अंतराल पर होते हैं। षडज- पंचम भाव में अंतराल 13 श्रुतियों का होता है और षडज मध्यम में 9 श्रुतियों का। जब दो स्वरों के बीच अंतराल 9 या 13 श्रुतियों का होता है, तो स्वर षडज- पंचम या षडज - मध्यम स्वर संवादी भाव होते हैं। ये भिन्नताएँ संवादतत्व के सिद्धांत पर आधारित है।

भाव पारस्परिक संबंधों पर आधारित है। षडज - पंचम का मधुर संबंध अच्छी वृत्ति (स्वभाव/व्यवहार) और अच्छे विचार उत्पन्न करता है। षडज और पंचम का संबंध श्रेष्ठ माना जाता है और वे परस्परपूरक संवाद स्वर हैं। श्रीनिवास पंडित ने इस सर्वोच्च भाव को षडज - पंचम भाव नाम दिया है। यह सभी संवादों में सबसे मधुर है। षडज पहला ~~मध्य~~ गाया जाने वाला स्वर है, इसलिए षडज और अगले गाए जाने वाले स्वर के बीच की दूरी षडज और पंचम के बीच समान दूरी होनी चाहिए अर्थात् 13 श्रुतियों का, तभी षडज - पंचम भाव की तरह गहरा

NOTES या गंभीर है। जिन स्वर युग्मों में 9 श्रुति का अन्तराल होता है, जिन स्वर युग्मों में 9 श्रुति का अंतराल होता है उन्हें षडज - मध्यम भाव कहते हैं।

प्रथम स्वर को षडज मानकर निम्न संवाद का

ઉદા :-

ષડજ - પંચમ ભાવ -

સા-પ, રે-ધા, ગા-નિ, મ-સા

ષડજ - મધ્યમ ભાવ :-

સા-મ, રે-પા, ગા-ધ, મ-નિ, પા-સાં

रागों में रस, स्थाई, संचारी भाव

रस - संगीत का मुख्य उद्देश्य आनंद प्राप्ति है। संगीत द्वारा आनंद रस की निष्पत्ति के कारण होता है। प्राचीनाचार्यों ने रस सिद्धान्त पर गहन चिंतन किया और भिन्न-भिन्न विधाओं के साथ 'रस' के संबंध में विवेचना किया। किसी भी काल के लिए यह जरूरी है कि उससे मानव हृदय में स्थित भाव जगे, और उन भावों से तत्सम्बन्धि रस की उत्पत्ति हो तभी मनुष्य आनंद की अनुभूति कर सकता है। इसी को सौन्दर्य बोध कहते हैं। भारतीय संस्कृति में भी सौन्दर्य का लक्ष्य सिर्फ सुन्दरता न होकर 'रस' है। अतः संगीत रस निष्पत्ति करने का सबसे प्रभावशाली माध्यम है। कला का प्राण रस है और कला का लक्ष्य रसानुभूति।

वह संगीत, थोड़ी सी परिवर्तित होकर मन के अन्दर एक साधारण नवीनता उत्पन्न कर देती है तब उसे 'रस' कहते हैं। भरत का रस सिद्धांत ही काव्य, साहित्य नाटक, कहानी संगीत आदि अन्य कलाओं पर लागू किया जाता है। साहित्य में

NOTES

नौ रस माने गए हैं - श्रृंगार, हास्य, करुणा, रौद्र, वीर, भयानक, वीभत्स, अद्भुत और शांत। प्राचीन संगीतज्ञ महर्षि भरत के अनुसार प्रधान रस चार हैं। — श्रृंगार, रौद्र,

FRIDAY 12

वीर, वीभत्स।

केवल स्वर संगीत में कलाकार के पास केवल स्वरों की क्रमबद्ध एवं सामंजस्य समूह रहता है, शुष्क वर्ण रहते हैं। आलाप रहता है, और इन्हीं सीमित साधनों को अपनाकर अनुकूल, काकू और मुद्राओं का आश्रय लेकर वह भाव की अभिव्यक्ति करता है। रसों का प्रमुख आधार भाव ही है। भाव ही रस को प्राप्त होते हैं जो भाव रस तक नहीं पहुँचते उन भावों को व्यक्ति के हृदय तक पहुँचाने के लिए विभाव, अनुभाव तथा संचारी भावों के सहयोग से रस की निष्पत्ति करते हैं

भरत ने 8 स्थायी भाव तथा उसके अनुरूप 8 रस बताए हैं। बाद में सम्मद आदि ने भी रसों की संख्या 9 मानी है। वे स्थायी भाव तथा उनके रस निम्न

स्थायी भाव	रस
रति	श्रृंगार
हास	हास्य
क्रोध	रौद्र
उत्साह	वीर
भय	भयानक
जुगुप्सा	वीभत्स
विस्मय	अद्भुत
निर्वेद	शांत
शोक	करुण

NOTES

संगीत तथा रस का संबंध इस युग

We cannot direct the wind but we can adjust the sails. – Anonymous

की कोई नई देन नहीं है। यह संबंध
बहुत प्राचीन समय से चला आ रहा है
जिस प्रकार संगीत का प्राचीनतम तथा
प्रामाणिक ग्रंथ भरत का नाट्य शास्त्र है, उसी
प्रकार संगीत एवं रस का संबंध भी
सर्वप्रथम नाट्य शास्त्र में ही उपलब्ध
होता है। भरत ने स्वर के बारे में कहा
सा, रे - वीर, रौद्र तथा अद्भुत रसों के
ध - वीभत्स तथा भयानक रसों का
ग नि - करुण रस के
म प - हास्य रस तथा श्रृंगार रसों
के पोषक है
वर्तमान समय में भी संगीत का अटूट
संबंध भावों तथा रसों से माना जाता है
संगीत का प्रयोजन श्रोताओं को आनन्द देना
है और इस आनन्द की परमावस्था ही

रसास्वादन है। रस ही आनन्द, गायन
वादन, और नृत्य की आत्मा है
पं० भातखंडे जी ने प्रचलित
हिन्दुस्तानी संगीत में रसों का समावेश स्वरों
के आधार पर किया है रागों के तीन वर्गों में
रसों की ~~R~~ R-स्थिति इस प्रकार बताई गई है
1. कोमल रे ध युक्त संधि प्रकाश राग -

इन रागों में शांत तथा करुण रस
की प्रधानता होती है, जैसे भैरव, भैरवी
जोगिया आदि।
2. शुद्ध रे, ध युक्त राग - ~~ये~~ ये रागों
~~वीर रस~~ ~~वीर रस~~ में श्रृंगार रस की

प्रधानता होती है। जैसे, बिलावल, गौड़-सारंग, देशकार आदि।
3. कोमल ग, नि युक्त राग - ये राग वीर रस प्रधान होते हैं जैसे आसावरी, मालकौंस, बागेश्री आदि।
रस संगीत की आत्मा है। शुद्ध संगीत में भी नाद, श्रुति, स्वर, रचना, ताल, वाद्य, आदि ऐसे साधन तथा तत्व हैं, जिनके माध्यम से रसों की सृष्टि संभव होती है यहां तक कि ~~शब्द में~~ संगीत में शब्द हो ना हो नाद के बल से संगीत में रस उत्पन्न हो जाती है। नाद ही संगीत में रस निष्पत्ति का मूलभूत साधन है।
शास्त्रकारों ने संगीत में श्रुति संख्या 22 मानी है।

श्रुति की जाति	रस
• दीप्ता	वीर, अद्भुत तथा रौद्र रस
• आयता	हास्य रस
• मध्या	वीभत्स, भयानक, हास्य संयोग श्रृंगार, वियोग रस
• मृदु	श्रृंगार रस
• करुणा	दैन्य तथा करुणा रस

NOTES संगीत में ध्रुवपद, धमार, ख्याल (बड़ा तथा छोटा), तराना, ठुमरी आदि प्रबंध रचनाएँ हैं। जो अपनी शब्द रचना, गठन द्वारा अधिकांशतः वीर, करुणा तथा शांत रस धमार द्वारा श्रृंगार

We are all broken, that's how the light gets in. – Ernest Hemingway

रस की उत्पत्ति होती है ध्रुवपद द्वारा अधिकांशतः वीर, करुणा तथा शांत रस, धमार द्वारा श्रृंगार रस की निष्पत्ति होती है टप्पा, तराना, आदि से श्रृंगार हास्य व रौद्र रस की सृष्टि होती है ठुमरी, दादरा, चैती आदि से श्रृंगार (संयोग, वियोग, रूठना, मनाना) भावों और रस निष्पत्ति के लिए श्रेष्ठ होते हैं

अतः संगीत में शब्द, स्वर, लय और ताल के सामंजस्य द्वारा विभिन्न रसों की सृष्टि की ~~जाति~~ जाती है

"संचारी भाव"

संचारी भाव :- संचारी का अर्थ है संचरण करने वाले। आलम्बन और उद्दीपन की उपस्थिति से आश्रय के हृदय में होने वाली हलचल अनेक भावों को जन्म देती है। वे भाव जल के बुलबुले के समान होते हैं तथा कभी किसी ओर तो कभी किसी ओर होते हैं। एक ही स्थिति में कई भाव उभरते और लुप्त होते हैं। तथा जैसे कई भाव कई-कई परिस्थितियों में अवसरानुकूल उत्पन्न और विलीन होते हैं इस प्रकार संचरण करते रहने के कारण ही इन्हें संचारी या व्यभिचारी भाव की संज्ञा दी गई है।

संचारी भाव 33 हैं —

अमर्ष, अपस्मृति, अवहित्था, असूया, आलस्य, आवेग, उत्सुकता, उन्माद, उग्रता, ग्लानि, गर्व, चिंता, चापल्य, जड़ता, त्रास, दैन्य, धैर्य, निद्रा, निर्वेद, मति, मद, मूर्छा, मोह, विबोध, विषाद, वितर्क, पीड़ा, व्याधि, शंका, स्मृति, स्वप्न, श्रम और हर्ष।

किन्तु यह संचारी भाव की यह संख्या 33 कम-से-कम संख्या की ही द्योतक है। संचारी भाव तो अनन्त हो सकते हैं। स्वयं इन 33 संचारी भावों के पारस्परिक मिश्रण से ही यह संख्या सहस्त्रों तक पहुँच सकती है।

संचारी भाव को व्यभिचारी भाव भी कहते हैं क्योंकि प्रत्येक भाव

You must do the thing you think you cannot do. – Eleanor Roosevelt

कई स्थायी भावों के साथ अभिमुख होकर उसका सहायक बनकर चलता है। कोई भी संचारी भाव किसी भी स्थाई भाव के साथ नियत रूप से नहीं रहता है।

संचारी भाव और स्थायी भाव में अंतर यह है कि स्थायी भाव हृदय में स्थायी रूप से जाग्रत होते हैं, तथा वे किसी विरुद्ध अथवा अविरुद्ध भाव से दबते नहीं हैं। रस निष्पत्ति - पर्यन्त स्थिर बने रहते हैं। किन्तु संचारी भाव अंत तक नहीं रहते। उठते-बुझते होते और मिटते रहते हैं यदि स्थाई भाव भी किसी स्थिति में उत्पन्न होकर मिट जाएँ तो इन्हें भी संचारी भाव माना जाता है,

उदाहरणार्थ :—

1. जब स्थायीभाव अशक्त ~~विभावों~~ विभावों से उत्पन्न हो तब वे संचारी भाव कहलाते हैं। जैसे - कामायनी के संघर्ष सर्ग में मनु और प्रजा के बीच होने वाले युद्ध की 'विभावादि' सामग्री उत्साह को प्रकट करने में अशक्त है। क्योंकि मनु अथवा प्रजा का एक-दूसरे को विनष्ट करने का लक्ष्य धर्मरक्षा, NOTES राष्ट्र रक्षा आदि जैसे महान नहीं है प्रत्युत प्रतिहिंसा है। मनु तेजस्वी तथा वीर न होकर दुर्बल रूप में वर्णित किये गये हैं तथा विवेक भी खो बैठे हैं अतः सम्पूर्ण सामग्री उत्साह

की अभिव्यक्ति करने में असमर्थ है। यह मनु और श्रद्धा का 'उत्साह' संचारीभाव कहलाएगा, स्थायीभाव नहीं।

२. जब स्थायी भाव अपने अनियत रसों में प्रयुक्त होने पर उस रस की सहायता करते हैं, तब भी वे संचारीभाव कहलाते हैं। वस्तुतः अन्य रसों के सहायक बन जाने के कारण स्थायीभावों में वह आस्वाद्य-योग्यता नहीं रह पाती जो उनकी अपने आधारभूत रस में रहती है। उदाहरणार्थ, शृंगार रस का सहकारी बन जाने पर 'हास' स्थायीभाव न कहा, सकार रस के सहकारी जितने ~~[illegible]~~ अन्य तथाकथित 'रस'-अंगभूत रस-वर्णित रहते हैं, उन सबके स्थायी भाव संचारी भाव कहे जाएँगे।

स्थायी भाव:- सहृदय के अन्तःकरण में जो मनोविकार वासना रूप से सदा विद्यमान रहते हैं तथा जिन्हें अन्य कोई भी अविरुद्ध भाव दबा नहीं सकता, उन्हें स्थायीभाव कहते हैं। यही स्थायीभाव ही (रस-रूप) आस्वाद का अंकुरकंद अर्थात मूलभूत है:-

NOTES

अविरुद्धा विरुद्धा वा यं तिरोधातुमक्षमाः।
आस्वादांकुरकन्दोऽसौ भावः स्थायीति सम्मतः॥

स्थाई भावों की संख्या सामान्यतः नौ मानी जाती है - रति, हास, शोक, उत्साह, क्रोध, भय, जुगुप्सा, विस्मय और निर्वेद। ये क्रमशः रसों के रूप में निष्पन्न (अभिव्यक्त) होते हैं। शृंगार, हास्य, करुण, वीर, रौद्र, ~~भयान~~ भयानक, वीभत्स, अद्भुत और शांत। इनके अतिरिक्त एक अन्य रस वत्सल भी माना जाता है जिसका स्थायीभाव 'वात्सल्य' है।

रस का स्थायीभाव के साथ संबंध - सहृदय के अंतःकरण में रति आदि स्थायीभाव वासना रूप से सदा, उस प्रकार विद्यमान रहते हैं जिस प्रकार मिट्टी में गंध। जिस प्रकार मिट्टी में पूर्व विद्यमान गंध, जल

21 SUNDAY

का संयोग पाकर प्रकट हो जाता है उसी प्रकार स्थायीभाव भी विभाव अनुभाव और व्यभिचारीभाव के संयोग से व्यक्त होने पर रस नाम से पुकारा जाता है। अथवा जिस प्रकार किसी खट्टे पदार्थ के संयोग से दूध, दही के रूप में ~~प्रकट~~ परिणत हो जाता

NOTES

है उसी प्रकार विभावादी के संयोग से स्थायीभाव रस नाम से अभिहित होते हैं।

वृन्द संगीत एवं वाद्य वृन्द :-

वृन्द गान या वृन्द संगीत का अर्थ है, सामूहिक गान, और वाद्य वृन्द का अभिप्राय है, तरह-तरह के वाद्यों का समवेत वादन। वृन्दगान या सामूहिक गान के अन्तर्गत कई-कई गायकों द्वारा जो गायन किया जाता है, वही वृन्द संगीत/गान है।

1. अंग्रेजी में वृन्द संगीत/गान को chorus या choir (क्वायर) कहा जाता है। वृन्द संगीत की परम्परा लगभग सभी देशों में है। क्योंकि प्रारम्भ में सभी स्थानों पर सामूहिक रूप से भजन-कीर्तन करने का रिवाज रहा। इसलिए भारतीय मंदिरों में और यूरोपियन देशों के चर्चों में धार्मिक स्थानों में सामूहिक/वृन्द संगीत की शुरुआत हुई। यही कारण है कि वृन्दगान या सामूहिक गान का विषय अधिकतर भजन-कीर्तन, राष्ट्रीय उद्बोधन गीत और सामाजिक गीत होते हैं।

वृन्द संगीत/गान का सर्वप्रथम उल्लेख महर्षि भरत लिखित "नाट्यशास्त्र" से प्राप्त होता है। भरत मुनि ने वृन्द संगीत को तीन श्रेणियों में उल्लेख किया है।

I. उत्तम वृन्द II. मध्यम वृन्द III. कनिष्ठ वृन्द

1. उत्तम वृन्द - उत्तम वृन्द के अंतर्गत कम से

NOTES

कम चार प्रमुख गायक होते हैं उनके साथ आठ और गायकों का समूह तथा 12 गायिकाएँ होती हैं चार वंशीवादक और मृदंग वादक। इन सभी के द्वारा सम्मिलित गान/गाये हुए संगीत उत्पन्न होती को वृन्द संगीत माना गया है।

ii) मध्यम वृन्द :- मध्यम वृन्द गान के अंतर्गत दो मुख्य गायक, चार सहगायिकाएँ तथा दो वंशी वादक और दो मृदंग वादक रहते हैं।

iii) कनिष्ठ वृन्द :- यह निम्न कोटि का वृन्दगान होता है। इसमें गायक-वादकों की संख्या भी कम होती है यानि एक मुख्य गायक, दो सहगायक, तीन गायिकाएँ, तथा एक वंशी वादक और एक मृदंग वादक रहता है। इससे सिद्ध होता है कि प्राचीन काल से ही वृन्दसंगीत में गायक और गायिकाओं के समूह रहते थे वृन्दसंगीत की अपनी एक प्रतिष्ठा, एक नियम होता है जिन्हें हम वृन्दसंगीत के तत्व ~~केन्द्र~~ कह सकते हैं

1. वृन्द संगीत, चूंकि सामूहिक गान है अतएव प्रत्येक कलाकार के स्वरों में एक रूपता का होना आवश्यक है, साथ ही उसके साथ के संगतकर्ता को रचना के अनुरूप संगति देनी चाहिए। गायक वादकों की सम्मिलित ~~संगति~~ संगति से गान अधिक आकर्षक और

NOTES मधुर होता है

2. जिस अवसर के लिए सामूहिक संगीत की रचना की जाय उसके अनुकूल उसमें साहित्यिक शब्दों का चयन आवश्यक है जैसे राष्ट्रीय पर्व पर जोशीले शब्दों

का एवं देश भक्ति के साहित्यक प्रयोग किया जाना चाहिये। इसी प्रकार भक्ति भाव के अवसर पर सामूहिक संगीत का प्रभाव भक्तिपूर्ण होना चाहिए यानि सरल, सरस अर्थ एवं भावपूर्ण शब्दों का चयन वृन्द संगीत में होना चाहिए।

3. गायक - गायिकाओं के स्वरों के आधार पर मेलोडी के साथ-साथ हार्मोनी का भी प्रयोग करके वृन्द संगीत को और भी आकर्षक बनाया जाता है।

4. वृन्द गान के साथ शब्दालाप या स्वरालाप का प्रयोग भी अच्छा रहता है।

5. वृन्द गान / संगीत के स्वरूप के अनुसार वाद्यों के प्रयोग भी सुनियोजन होना चाहिए। प्राचीन वृन्द संगीत में बाँसुरी, वीणा और मृदंग आवश्यक संगति वाद्य थे। आधुनिक वृन्दसंगीत पर्याप्त विकसित हुए है। उनके साथ तबला, ढोलक, नाल, मृदंग, पखावज, सितार, सरोद, सन्तूर, शहनाई और बांसुरी का प्रयोग किया जाता है तदानुसार संगीत भी लुभावने और आकर्षक होते है।

अतएव वृन्दसंगीत और वाद्य वृन्द गायक और गायिकाओं एवं विभिन्न प्रकार के वाद्यों का सम्मिलित प्रयोग संगीत की एक अनूठी विधा है, जिसकी परंपरा प्राचीन काल से चली आ रही है।

वृन्द-संगीत पर पाश्चात्य का प्रभाव - :

NOTES

A friend is one who has the same enemies as you have. – Abraham Lincoln

1. प्राचीन समय से ही हमारे यहाँ ~~विभिन्न~~
विभिन्न प्रकार के वाद्यों का समवेत
वादन हुआ करता था। जिसके परिणाम
स्वरूप आज भी मंदिरों में देव-आराधना
के समय शंख, घंटे, घड़ियाल, झाँझ
मृदंग, ढोल, मंजीरे, वेणु (बाँसुरी) वीणा
आदि वाद्यों का सामूहिक रूप से वादन
किया जाता है। इसे मंदिरों का परम्परागत
संगीत कहा जा सकता है।

प्राचीन संगीत साधकों को प्रत्येक
वाद्य की अलग-अलग ध्वनियों के
प्रभाव की जानकारी थी। इसी कारण
भारतीय मंदिरों में भिन्न-भिन्न वाद्यों
के सामूहिक वादन की परम्परा रही है।
वाद्यों का सामूहिक वादन का नाम ही
वृन्दवादन या वाद्यवृन्द रखा गया है
विदेशी मूल के "आर्केस्ट्रा" की आधार-
भूमि भारतीय वृन्दवादन या वाद्य-वृन्द है
यहीं से विदेशी आर्केस्ट्रा का विकास
हुआ।

2. भारतीय वृन्दवादन की लिपिबद्ध
चर्चा सर्वप्रथम महर्षि भरत के ग्रंथ नाट्य-
शास्त्र के आतोद्य प्रकरण में विस्तार से
NOTES
की गई है। पाश्चात्य संगीत में जिसे
आर्केस्ट्रा और भारतीय संगीत में वाद्यवृन्द
या वृन्दवादन कहा जाता है, उसे नाट्यशास्त्र
में 'कुतुप' कहा जाता है। जिसमें तत कुतुप
अवनद्ध कुतप, नाट्य कुतप कहा गया है

...ding to his own light. — Mahatma Gandhi

3. प्राचीन संगीत में मूल रूप से दो प्रकार के वाद्य थे, जिन्हें स्वर वाद्य और ताल वाद्य कहा गया। स्वर वाद्यों के अन्तर्गत वीणा आदि के साथ बाँसुरी आदि का सामूहिक वादन के प्रयोग की प्रथा रही। इसी प्रकार तालवाद्यों में अवनद्ध वाद्यों की प्रधानता थी और घनवाद्य उसके सहायक वाद्य थे। अतएव प्राचीन काल से ही भारतीय संगीत में वृन्दवादन का प्रचलन रहा। स्व० ठाकुर जयदेव सिंह जी ने इस संदर्भ में लिखा है – "कुतुप" एक महत्वपूर्ण शब्द है। प्रायः लोगों की यह धारणा है कि भारतीय संगीत में आर्केस्ट्रा या वाद्यवृंद नहीं रहा। "कुतुप" इस भ्रान्त धारणा का निराकरण कर देता है। इसमें संदेह नहीं कि हमारा 'कुतुप' पाश्चात्य देशों के 'हार्मनीयुक्त' आर्केस्ट्रा जैसा नहीं था फिर भी कुतुप अपने भारतीय संगीत के अनुकूल स्वर संक्रम (मेलोडी) पर आश्रित था। स्व० डॉ० लालमणि मिश्र के मत से वाद्यों के सामूहिक वादन की प्रथा और भी पहले से थी – "मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि भले ही भरत नाट्यशास्त्र के अतिरिक्त और किसी ग्रंथ में आर्केस्ट्रा संबंधी कोई बात नहीं लिखी गई हो किन्तु हिन्दुस्तान में भरत से भी पूर्व वृन्द-वादन की कोई ना कोई प्रणाली प्रचलित अवश्य थी।" यही कारण है कि प्राचीन संगीत संबंधित ग्रन्थों में लगभग

पाँच सौ वाद्यों का उल्लेख मिलता है।
4. पाणिनी - शिक्षा में वाद्य-वृन्द के लिए "तूर्य" शब्द का प्रयोग किया गया है और वाद्य वादकों के लिए "तूर्यांग" शब्द का प्रयोग किया गया था।

वाद्य-वृन्द पर शास्त्रीय, अर्द्ध शास्त्रीय और यथावसर वाद्यों पर रचनाएँ प्रस्तुत की जाती थी। जब राजाश्रयी हुआ तो इसका प्रयोग अवसर के अनुकूल होता रहा। जैसे सम्राट अशोक की सवारी जब तीर्थ-यात्रा के लिए निकलती थी तो जयघोष के साथ वाद्यों का भी वादन हुआ करता था। इसी प्रकार गुप्तकाल में युद्ध के अवसर पर शौर्य और पराक्रम की प्रेरणा देने के लिए अवनद्ध वाद्यों के अलग-अलग प्रकारों का वादन हुआ करता था।

28 SUNDAY

5. इस प्रकार मुगलकाल में भी वाद्य वृन्द की प्रथा थी। उस समय वाद्य-वृन्द को अरबी भाषा में "नौबत" नाम दिया गया। वाद्य-वृन्द को 'नौबत' इसलिए कहा गया क्योंकि इसमें नौ प्रकार के वाद्यों का सम्मिलित वादन था जैसे :- दमामा, नक्कारा, ढोल, करना, सुर्ना,

NOTES

नफीरी, सींग, सोइन, और झाँझ।
आज भी विवाह शादियों में लोग शहनाई, नफीरी, और नक्कारा का वादन करवाते हैं। विदेशों में आर्केस्ट्रा शब्द का प्रयोग 17वीं शताब्दी से शुरू हुआ जिसका विकास होने पर

उसके वृहद स्वरूप को सिम्फनी नाम दिया।
6 दूसरा महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि चाहे वृन्दवादन हो और चाहे पाश्चात्य आर्केस्ट्रा इन सभी आरम्भ ईश्वर आराधना के संदर्भ में हुआ। आगे चलकर इसका विकास नाट्य या थियेटर के अंतर्गत हुआ। मानव निर्मित जितने भी वाद्य हैं उनकी ध्वनि का प्रभाव भी भिन्न होता है। इसलिए किसी दृश्य, किसी कथा, या ईश्वरीय शक्ति को साकार करने के लिए विभिन्न ध्वनियों के ~~[illegible]~~ वाद्यों के समूहिक प्रयोग की परम्परा प्राचीन काल से है।

वाद्य-वृन्द की विशेषता यह है कि किसी भी भाव या कथानक को पूर्ण रूप से अभिव्यक्त करना। यहि कारण है कि फिल्मों में और टी.वी. धारावाहिकों में इसका व्यापक रूप से प्रयोग किया जा रहा है क्योंकि वाद्यों का प्रयोग दृश्य और श्रव्य दोनों प्रकार के भावों को साकार करने में समर्थ हैं। साथ ही इनमें रसानुभूति भी होती है।

7 वर्तमान समय में लोग भारतीय वृन्दवादन की अपेक्षा विदेशी मूल के
NOTES आर्केस्ट्रा से अधिक परिचित हैं। इसका मुख्य कारण है मुगलकाल के अंतिम वर्षों और अंग्रेजी सत्ता तक वाद्य वृन्द वादन का विकास रुक गया था इसलिए तत्कालीन संस्कृत भाषा में लिपिबद्ध

संगीत-ग्रन्थों में भी वाद्य-वृन्द के सम्बंध में चर्चा नहीं की गई। लेकिन स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हमारे गायक वादकों का सम्पर्क विदेशी गायकों और वादकों से हुआ तो वृन्दवादन की ओर लोगों की रुचि भी बढ़ी और उपयोगि-ता भी समझ में आने लगी।

बंगाल के जोतिन मोहन और सौरिन्द्र मोहन टैगोर के सहयोग से क्षेत्र मोहन गोस्वामी ने सन् 1859 में पहला वृन्दवादन रंगमंच पर स्वतन्त्र रूप से प्रदर्शित किया। मैहर के उस्ताद स्व० अलाउद्दीन खाँ ने सितारंग नामक प्रथम भारतीय मैहर बैण्ड की स्थापना की।

8. आज वृन्दवादन / वाद्य-वृन्द केवल बादशाहों या समारोहों की सवारी आदि से सम्बन्धित नहीं रहा बल्कि वृन्दवादन का प्रचलन आम जनता के बीच हो चुका है, कोई भी नाटक, कोई भी स्वांग, रास-मंडली या नौटंकी बिना वाद्य-वृन्द के अधूरी तथा शुष्क समझी जाती है।

भारतीय वाद्यवृन्द का प्रचलन प्राचीन काल से ही हो रही है फिर भी आम जनता में

NOTES वाद्य वृन्द की अपेक्षा विदेशी मूल के आर्केस्ट्रा का आकर्षण अधिक है। किसी रचना को वाद्यों पर उतारने के लिए पाश्चात्य नोटेशन की शिक्षा, तथा भिन्न-भिन्न वाद्यों की quality उनके उपयोग आदि की

जानकारी दी जाती है।
(9) अधिकांशतः आर्केस्ट्रा में छः तरीके के वाद्यों का प्रयोग किया जाता है जैसे- तंत्रीवाद्य, लकड़ी का सुषिर वाद्य, पीतल के सुषिरवाद्य, घनवाद्य, इलैक्ट्रोनिक वाद्य, कुंजी पटल वाद्य, इसके अलावा भी जो वाद्य उनके आर्केस्ट्रा में सहायक हैं, उनका भी प्रयोग किया जाता है इसलिए पाश्चात्य आर्केस्ट्रा लोगों के आकर्षण का केन्द्र होता है।

भारतीय वृन्द वादन का भी प्रचलन बढ़ता जा रहा है। इसमें उत्तरी तथा दक्षिणी भारत के सभी वाद्य तथा विदेशी वाद्यों का प्रयोग किया जाने लगा है जैसे सुषिर वाद्य के अन्तर्गत मुरली, बांसुरी, शहनाई, क्लारनेट, नाल, हारमोनियम, पियानो, इलेक्ट्रोनिक सिंथेसाइज़र आदि। तन्त्री वाद्यों में सारंगी, वायलिन, सितार, सरोद, इलेक्ट्रीक गिटार, वीणा, मेंडोलिन आदि।

अवनद्ध वाद्यों के अन्तर्गत ढोलक, ढोल, पखावज, तबला, ड्रम, बोंगो, वाद्य, शंख, मृदंग आदि,

NOTES

~~[illegible]~~ घन वाद्यों में मंजीरे आदि। यद्यपि वाद्य वृन्द का प्रचलन उत्तर और दक्षिण दोनों संगीत में रहा है उत्तर पाश्चात्य आर्केस्ट्रा की तुलना में अभी भी भारतीय वृन्द का उतना विकास नहीं हुआ

भारतीय वाद्य-वृन्द का विकास -

आज भारत में वाद्य-वृन्द या वृन्दवादन की समझ लोगों में बढ़ी है, फिर भी इसके विकास में कमी दिखाई देती है। इसके लिए निम्न बातों पर ध्यान देना चाहिए -

1. वाद्य वृन्द की शिक्षा अलग से दी जानी चाहिए जिसमें वाद्यों की Tonal quality के आधार पर वाद्यों की जानकारी, उनके प्रयोग और बजाने के लिए अलग-अलग शिक्षक तैयार किये जाने चाहिए।

2. भारतीय संगीत की प्रकृति एकल है, लेकिन आर्केस्ट्रा विकसित करने के लिए विभिन्न वाद्यों के द्वारा हारमोनाइस (Harmonic music) संगीत का अभ्यास करवाना चाहिए जिसमें वृन्दवादन में नित नए कार्यक्रम शामिल किया जा सके।

3. देशी वाद्यों के प्रयोग के साथ-साथ विदेशी वाद्यों को भी वृन्दवादन में सम्मिलित करके वृन्दवादन को नए आयाम देने चाहिए। इसके लिए विदेशी कलाकारों का सं[illegible]

4. आज संगीत की आश्रय दाता आम जनता है अतः उनके मनोरंजन और उनके आकर्षण के लिए वृन्दवादन में रस

NOTES और भावों को पूरा-पूरा स्थान देना चाहिए

5. सरकार तन्त्र को भी भारतीय वृन्द पर ध्यान देना चाहिए, आवश्यकता पड़ने पर आर्थिक मदद भी देनी चाहिए।

6. इसके अतिरिक्त, प्रथमतः शास्त्रीय संगीत

Weakness of attitude becomes weakness of character. - Albert Einstein

की जो भी सम्मेलन होते हैं उनमें भारतीय वृन्द-वादन को भी स्थान देना चाहिए।

हिन्दुस्तानी संगीत पर पाश्चात्य संगीत का प्रभाव

हिन्दुस्तानी संगीत पर पाश्चात्य संगीत का प्रभाव! —

भारतीय संगीत विश्व के उस चिरंतन, शाश्वत सार्वभौमिक संगीत का प्रतीक है जिसने अपने अंदर बहुआयामी तत्वों को समाहित किया है और उन बहुआयामी तत्वों में जहाँ हमारी संगीत के पुरातन स्वरूप के अन्दर अंतर्गत आध्यात्मिकता का सर्वाधिक स्वरूप इसके माध्यम अंतर्निहित है। और उसे परम शाश्वत तत्व की प्राप्ति का एकमात्र साधन बताया गया है। हमारे ऋषियों, मुनियों की साधना इस बात की ओर इंगित करती है कि उन्होंने अपनी रचना धर्मिता और मौलिक सोच को उसकी अस्मिता के साथ जीवित रखने का भागीरथी प्रयास किया यानि असंभव प्रयास किया। संगीत का नाद शुद्ध स्वरूप में जीवित रखकर उसे पोषित किया। यही कारण है जब हमारे संगीत की बात होती है तो उसमें सहजता, सौम्यता, सरलता, तादात्म्यता का

NOTES रूप परिलक्षित होता है।

भारतीय संगीत को सम्पूर्ण विश्व में उसके वैज्ञानिकता के आधार पर सम्मान प्रदान किया जाता है। चाहना म्यूजिक का जरखेरी

के प्रोफेसर ज़ाओ ने स्पष्ट रूप से कहा कि भारतीय संगीत पूर्ण रूपेण वैज्ञानिकता की कसौटी पर खरा है। भारतीय संगीत ने विश्व संगीत को रचनात्मक दिशा दी है। इसलिए आज भारतीय संगीत भारत देश से ज्यादा बाहर लोकप्रिय हो रहा है। रसिकजन उसको आत्मसात कर रहे हैं और अत्यधिक रूप से पसंद कर रहे हैं।

वैदिक काल से वर्तमान समय तक यदि भारतीय संगीत ~~पर~~ के काल विकास क्रम पर दृष्टिपात करें तो यह स्पष्ट होगा देश काल - परिस्थिति और तत्कालीन संगीतज्ञों ने इसमें सापेक्ष रूप से परिवर्तन किया। वैदिक काल मे जहाँ संगीत के शास्त्रीय पक्ष को सम्पुष्ट किया गया, वहीं उसके प्रायोगिक पक्षों को यथावत रखने भी प्रयास किया गया। लेकिन विकास की इस धारा में संगीत का पारंपरिक तत्वों और उसकी अस्मिता में बहुत कुछ परिवर्तन हुआ, जिसके कारण मूलभूत संगीत के स्वरूप में अंतर आया। इसका मुख्य कारण तत्कालीन परिवेश और उसके

SUNDAY 05

NOTES अनुसार सामाजिक सोच रहा होगा।

धीरे - धीरे यह विकास क्रम मध्यकालीन युग की ओर अग्रसर हुई। भारतीय वैदिक संगीत के स्वरूप में स्पष्ट रूप से परिवर्तन की धारा

To bring anything into your life, imagine that it's already there. – Richard Bach

इस समय दिखाई पड़ती है। तेरहवीं सदी के उत्तरार्द्ध में अलाउद्दीन खिलजी के समय अमीर खुसरो प्रमुख संगीतज्ञ थे और संगीत के विशेष ज्ञाता थे। उन्होंने भारतीय संगीत के वैदिक स्वरूप को धीरे-धीरे परिवर्तन कर इरानी संगीत के प्रभाव को समाहित किया। यहीं से भारतीय संगीत को परिवर्तन की दिशा मिलती है। अमीर खुसरो ने जो कुशल राजनीतिज्ञ थे, अपनी ~~बौद्ध~~ बौद्धिक क्षमता से ख्याल, तराना शैली वाद्यों में हमारे ही वाद्य वीणा का स्वरूप बदल कर उसे सहतार (सितार) बना दिया।

कहने का तात्पर्य यह है कि विदेशी संगीत या पाश्चात्य संगीत का प्रभाव यहीं से देखा जा सकता है। हमारे वैदिक संगीत में निहित आध्यात्मिकता का स्वरूप यहीं से परिवर्तित होता है

आकर्ष प्रहार :-

तंत्रवाद्य में आकर्ष प्रहार - अपकर्ष प्रहार
तार पर दो प्रकार से प्रहार करते हैं जिन्हें क्रमशः आकर्ष और अपकर्ष प्रहार कहते हैं। बाहर की ओर से तार पर प्रहार करते हुए दाहिने हाथ की तर्जनी को पीछे लाने की क्रिया आकर्ष प्रहार कहलाती है। इसे अंदर की ओर से तार पर प्रहार करते हुए दाहिने हाथ की तर्जनी को आगे ले जाने की क्रिया को अपकर्ष प्रहार कहते हैं।
आकर्ष प्रहार को सुलट प्रहार कहते हैं इससे 'दा' की ध्वनि निकलती है।
अपकर्ष प्रहार में 'रा' की ध्वनि निकलती है।

घसीट :-
इसका अर्थ है तार पर अँगुली को घसीटना। सितार में किसी एक ~~प्रकार~~ स्वर से आगे के किसी अन्य स्वर तक शीघ्रता से इस प्रकार बजाने को घसीट कहते हैं, कि बीच के सभी स्वर स्वर (परदे) क्रमशः स्पर्श होते जाएँ और बायाँ हाथ न उठे, किन्तु उनकी ध्वनि कानों को अप्रिय न लगे और केवल प्रारंभ और अंत के स्वर स्पष्ट रूप से सुनाई पड़े, उदाहरणार्थ 'सा' से 'प' तक के घसीट में तर्जनी सभी

NOTES

पर्दों के ऊपर से इतनी शीघ्रता से गुजरे कि बीच के स्वर स्पष्ट न सुनाई पड़े और केवल सां और प को ध्वनि सुनाई पड़े।

जोड़ :-
सितार के आलाप का वह भाग जो लयबद्ध होता है जोड़ कहलाता है। जोड़ का अर्थ है 'जोड़ना'। सितार का आलाप बहुत कुछ ध्रुपद के आलाप से मिलता-जुलता है, मोटे तौर से आलाप चार भागों में बांटा जा सकता है, स्थाई अंतरा, संचारी और आभोग। आलाप के बीच-बीच में जब सा पर लौट आते हैं तब आवश्यकतानुसार किसी एक स्वर पर जोर देते हैं, जिसे सम दिखाना कहते हैं

झाला :-
यह मुख्यतः सरोद का और सितार की चीज है इसे गतखानी के अंत में द्रुत गति में बजाया जाता है। चिकारी के तार पर दायें हाथ की तर्जनी या कनिष्ठ

NOTES

से रा रा बजाना को झाला कहते हैं। झाला बजाते समय बहुधा बाज का तार भी प्रयोग करते हैं, बाज के तार पर दा और चिकारी के तार पर रा बजाते हैं। कभी-कभी दायें हाथ से तार और चिकारी

का तार बजाते समय झाले के बीच में बायें हाथ से अन्य स्वर भी बजाते हैं। झाला में चिकारी और बाज के अतिरिक्त अन्य तारों की ध्वनि कम रहती है। दा रा रा के परिवर्तन से झाला के विभिन्न प्रकार बजाये जाते हैं। बोल की दृष्टि से झाला के मुख्य दो प्रकार हैं (1) सुलटे और (2) उलटे। प्रथम प्रकार के झाला में पहले बाज के तार पर 'दा' और तब चिकारी पर 'रा' बजाते हैं और दूसरे प्रकार में पहले बाज के तार पर 'रा' और तब चिकारी ~~पर~~ के तार पर 'दा' बजाते हैं।

खटका:

खटका एक ऐसा आभूषण है जिसमें एक स्वर को, स्वरों के समूह के रूप में बजाया जाता है। मुख्य स्वर सबसे प्रमुखता से प्रदर्शित होता है, लेकिन एक या दो पड़ोसी स्वर भी शामिल किये जाते हैं। मुख्य स्वर वह स्वर होता है जिसे खटके के स्थान पर सोचे गाया जा सकता है, बिना राग की अंतर्निहित संरचना को प्रभावित किए। खटके बहुत आम हैं, लेकिन उनका प्रयोग यादृच्छिक नहीं है। अलग-अलग रागों में अलग-अलग स्वर खटके के उपयोग के लिए उपयुक्त होते हैं। लेकिन हर बार नहीं। अनुभव आपको सिखाता है कि कब और किस स्वर पर खटका उपयुक्त लगता है।

JUNE
JULY
SUNDAY 12
AUGUST
NOTES
Think big thoughts but relish small pleasures. – H. Jackson Brown, Jr.

मुर्की :-

मुर्की बहुत हद तक खटके की तरह होती है, जिसमें आम तौर पर दो या तीन पड़ोसी स्वरों को बहुत तेजी से और हल्के ढंग से बारी-बारी से बजाया जाता है। तेज गति वाली लोक-प्रचलित रचनाओं में, मुरकी को हल्का और तीखा स्वभाव देने के लिए गाया जाता है। धीमी, अधिक कामुक रचनाओं, जैसे ठुमरी में, उन्हें थोड़ा चिकना किया जाता है, ताकि वे तीखे की बजाय अधिक सुस्त लगें।

जैसे - रंगी सारी गुलाबी चुनरिया ऽऽरे
सा रे ग ग ग ग म म गरेगरेरे, रेगरेरे, सा ध़

मोहे मारे ऽऽऽ नजरिया संवरिया रे ऽऽऽ
प ध ध रे के गरेगरे सासास गरे गसासा सा नि ध़ नि नि प

आओ जी आओ तुम करो नाऽऽऽऽऽ बतियांऽऽऽ
सा म ग प प प प, मपम मपमगमगग गमग मग रेसा

पे जो वाली है मोरीऽऽ उमरिया ऽऽऽऽरेऽ
सारे गग गग मगम गरेगरेरे, रेगरेरे सा ध़

NOTES

सासासागरे
मोहे मारे ऽऽऽ नजरिया संवरिया रे ऽऽऽ
प ध ध रे गरेगरे गसासासा नि धनि नि प

मोहे मारे नजरिया संवरिया -3
प ध ध रे गरेगरे सासासागरे सासासासा

There's more beauty in truth, even if it is dreadful beauty. – *John Steinbeck*

गमक :-

गमक शब्द है जिसका प्रयोग/उपयोग ड्रम की ध्वनि का वर्णन करने के लिए किया जाता है। जब आप ड्रम हेड पर प्रहार करते हैं तो कम्पन होता है। एक संगीत आभूषण के रूप में, यह एक स्वर को दोलन के साथ गाने की एक तकनीक है और कंपन पैदा करती है जो संगीत में एक नया आयाम या बनावट जोड़ती है। व्यवहार में गमक का लाभ प्रभाव तब सबसे प्रभावी रूप से तब सुना जा सकता है जब लगातार कई स्वरों को एक स्वर ध्वनि का उपयोग करके तेज, समान गति से कम के साथ गाया जाता है। कम्पन की तीव्रता और तरंग दैर्घ्य और इस्तेमाल की गई आवाज की गुणवत्ता के संदर्भ में विभिन्न प्रकार के गमक संभव हैं।

NOTES

संगीत वाद्यों का वर्गीकरण :-

आदिकाल से वर्तमान काल तक मानव विभिन्न प्रकार के संगीतिक वाद्यों का प्रयोग करता रहा है। इन वाद्यों का उल्लेख संगीत के प्राचीन ग्रंथों में भी मिलता है। भारतीय संगीतिक वाद्यों का वर्गीकरण का आधार मुख्यतः ध्वनि रहा है। सर्वप्रथम भरतमुनी ने अपने ग्रंथ नाट्य शास्त्र में सांगीतिक वाद्यों का चतुर्विध वर्गीकरण किया है। संगीत वाद्य चार प्रकार के होते हैं- तत्, ~~अवनद्ध~~ अवनद्ध, घन और सुषिर।

1. तंत्रीवाद्य या तत वाद्य -

तत वाद्य वे वाद्य यंत्र होते हैं जिन पर तार या तंत्री के कम्पन से स्वर उत्पन्न किये जाते हैं। ये कम्पन तार पर आघात या घर्षण द्वारा उत्पन्न किए जाते हैं। तत श्रेणी के अंतर्गत वे वाद्य आते हैं जिन्हें अंगुलियों, मिजराब या जवा आदि से आघात कर अथवा गज से घर्षण कर बजाते हैं। इसके अंतर्गत तानपुरा, वीणा, सितार, सरोद, वायलिन, सारंगी, इसराज आदि वाद्य आते हैं।

अवनद्ध वाद्य -

अवनद्ध संस्कृत भाषा

का शब्द है जिसका अर्थ है - मढ़ा हुआ, लपेटा हुआ या चारों तरफ से कसा हुआ। वे वाद्य यंत्र जो अन्दर से खोखले होते हैं, जिनके मुख पर चमड़ा मढ़ा होता है तथा जिन पर हाथ से या डंडी से आघात करके ध्वनि निकाली जाती है, अवनद्ध वाद्य कहलाते हैं। अवनद्ध वाद्य मूलतः मिट्टी, लकड़ी या धातु के बने होते हैं। प्राचीन काल में मृदा यानी मिट्टी से बनाए जाने के कारण इन्हें साधारणतः मृदंग ही कहते थे।

प्राचीन काल में निम्नलिखित अवनद्ध वाद्यों का उल्लेख प्राप्त होता है - भूमिदुन्दुभी, दुन्दुभी, पुष्कर, मृदंग, पटह, हुडुक्का, नगाड़ा, आदि। वर्तमान में तबला, पखावज, मृदंगम, कंजीरा, तबिल, ढोलक, नाल, डफ, दुक्कड़, ढोल, खोल, और पुंग आदि अनेक वाद्यों का प्रयोग हो रहा है।

सुषिर वाद्य :-

सुषिर वाद्यों के अंतर्गत

NOTES वे वाद्य आते हैं जिनमें स्वरों की उत्पत्ति वायु के कम्पन द्वारा उत्पन्न किए जाते हैं इन वाद्यों में वायु के दबाव को ही घटा बढ़ा कर स्वर - ऊँचा - नीचा किया जाता है

इसके अंतर्गत बाँसुरी, शहनाई, शंख, नागस्वरम्, क्लेरोनेट, सैक्सोफोन, हारमोनियम, आर्गन, माउथ आर्गन, एकॉर्डियन आदि वाद्य आते हैं।

घन वाद्य :-

घन वाद्य मूलतः लकड़ी, काँसा, पीतल, आदि धातु से बनाए जाते हैं, जिन्हें आपस में टकराकर या डंडियों के प्रहार कर बजाते हैं। इनका मुख्य कार्य लय धारणा करना है। लोक संगीत में इसका प्रयोग अधिक होता है। इनके अंतर्गत आनेवाले वाद्य हैं- छोटा छोटी, झांझ, खरताल, मंजीरा, घुँघरू, मुरचंग आदि।

SUNDAY 19

अवनद्ध वाद्य :-

ताल संगीत का प्राण है। अवनद्ध वाद्य ताल-ठेकों को धारण करते हैं। आज हम अवनद्ध वाद्य के बिना संगीत की कल्पना भी नहीं कर सकते हैं। अवनद्ध वाद्य के संगति से संगीत लयबद्ध, तालबद्ध, मधुर और मनोरंजक हो जाता है। लगभग सभी अवनद्ध वाद्यों का विकास गायन, वादन, और नृत्य की संगति करने के उद्देश्य से हुआ है। वर्तमान में

NOTES

तबला और पखावज जैसे वाद्यों ने अपने नाद सौंदर्य और नाद वैचित्र्य के गुणों के कारण संगीत में अपना एक स्वतंत्र स्थान बना लिया है। आज संगीत समारोह में तबला और पखावज का एकल वादन श्रोताओं के लिए आकर्षण का केंद्र होता है।